ओ३म्

दयानन्दसन्देश

आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट का मासिक पत्र

मार्च २०१६

Date of Printing = 05-03-16
प्रकाशन दिनांक= 05-03-16

वर्ष ४५ : अङ्क ५
दयानन्दाब्द : १९२
विक्रम-संवत् : फाल्गुन-चैत्र, २०७२
सृष्टि-संवत् : १,९६,०८,५३,११६

संस्थापक : स्व० ला० दीपचन्द आर्य
प्रकाशक व
सम्पादक : धर्मपाल आर्य
सह सम्पादक : ओम प्रकाश शास्त्री
व्यवस्थापक : विवेक गुप्ता

कार्यालय :

दयानन्दसन्देश (मासिक)

४२७, मन्दिर वाली गली, नया बांस,
खारी बावली, दिल्ली-६
दूरभाष : २३९८५५४५, ४३७८११६१
चलभाष : ९६५०५२२७७८
E-mail : aspt.india@gmail.com

एक प्रति ५.०० रु०
वार्षिक शुल्क ५०) रुपये
आजीवन सदस्यता ५००) रुपये
विदेश में २०००) रुपये

इस लेख में

- ❏ निरुपमेय दयानन्द..... २
- ❏ वेदोपदेश ३
- ❏ ये सहिष्णुता...... ४
- ❏ अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता.... ६
- ❏ पृथ्वी गाय का...... ९
- ❏ काशी शास्त्रार्थ.... ११
- ❏ सरमा पणि १२
- ❏ योग रहस्य १४
- ❏ अलगाववादी सिखों को..... १७
- ❏ महर्षि दयानन्द..... २०
- ❏ घर के अन्दर...... २१
- ❏ कर्म और फल २४

सत्यार्थप्रकाश

प्रचार संस्करण ३००० रुपये सैकड़ा
स्पेशल (सजिल्द) ५००० रुपये सैकड़ा में प्राप्त करें।

निरुपमेय दयानन्द

(डॉ. शिवकुमार शास्त्री, चलभाष 9810095061)

विचार विचक्षण पाठकवृन्द! ब्रह्मा से महर्षि दयानन्द पर्यन्त इस भूण्डल पर जितने ऋषि-महर्षि, सन्त-महात्मा, योगी-यति, ज्ञानी-ध्यानी, आचार्य-उपदेशक और समाज सुधारक हुए हैं, उन में युगप्रवर्तक महर्षि दयानन्द का विशेष स्थान है।

इतिहास साक्षी है, जिस समय देव दयानन्द का प्रादुर्भाव हुआ, उस समय प्राचीन वैदिकधर्मी नाना प्रकार के मत-मतान्तरों की मदिरा से मत्त होकर पथभ्रष्ट हो चुका था। एक ईश्वर के स्थान पर अनेक मनमाने ईश्वर बना लिए गए थे। श्रेष्ठतम कर्म यज्ञ दूषित और उपेक्षित हो गया था। गुरुडम और पाखण्ड की जड़ें गहरी जम चुकी थीं। गुरु को ईश्वर से बड़ा समझा जाता था और पाखण्डी सर्वत्र सम्मान पा रहे थे।

दुधमुँहे बच्चों की शादी करने को धर्म माना जाता था। करोड़ों बाल-विधवाओं का करुणक्रन्दन मानव समुदाय के लिए अशान्ति का कारण बना हुआ था। छोटी-छोटी कन्याओं के साथ बूढ़ों को विवाह रचाते हुए लज्जा नहीं आती थी। कन्याओं को पढ़ाना पापकर्म कहा जाता था। नारी नरक का द्वार है, कह कर मातृशक्ति का घोर अपमान हो रहा था। संसार को सपना, ब्रह्म और जीव को एक तथा गृहस्थ को जंजाल बताया जाता था। सारे संसार को चुनौती देने वाला भारत अविद्या-अन्धकार में फँस कर दर-दर की ठोकरें खा रहा था। विधर्मियों की गोद में गए अपने ही बन्धुओं को पुनः लौटा लाने में किसी का साहस नहीं था। मनुष्य, मनुष्य को जन्मगत जाति के आधार पर घृणा की दृष्टि से देखता था।

सम्पूर्ण भूमण्डल पर सार्वभौम चक्रवर्ती साम्राज्य स्थापित करने वालों के वंशज पराधीनता की जंजीरों में जकड़े हुए थे। उस समय के शासक सुरा और सुन्दरी के दास बन चुके थे। सर्वत्र दुराचार, व्यभिचार, अत्याचार और अनाचार का बोलबाला था।

इन विषम से विषमतर और विषमतर से विषमतम परिस्थितयों में देव दयानन्द ने आर्यजाति को झकझोरा, उसे अपने अतीत के दर्शन कराए और उज्ज्वलतम भविष्य के प्रति सचेष्ट किया, हमें अपने स्वरूप के दर्शन कराए।

आज जो भी शुभ परिवर्तन दिखाई दे रहे हैं, उनके मूल में देव दयानन्द का अथक परिश्रम विद्यमान है। स्वराज्य शब्द का बोध कराने वाले महर्षि दयानन्द की कृपा से हमारे पराधीन देश भारत में नई चेतना और जागृति आई थी। अब स्त्रियों को अधम कहने का साहस कोई नहीं कर सकता। आज कहाँ हैं, बालविवाह के समर्थक? स्त्रीशिक्षा का विरोध करने वालों की कन्याएँ ऊँची से ऊँची उपाधियों से विभूषित हो रही हैं। छुआछूत वैधानिक अपराध घोषित कर दिया गया है। जिनकी छाया पड़ जाने मात्र से जो धर्मभ्रष्ट हो जाया करते थे, वे इनके साथ बैठकर जलपान करते हैं। अब तो विधर्मी बने अपने भाइयों की शुद्धि का कार्य वे लोग करने लगे हैं, जो कभी इसे पाप कहते थे। अब मृतकभोज जैसी कुप्रथाओं का समर्थन कोई भी बुद्धिमान नहीं करता।

जिस ऋषि ने बोधप्राप्ति से ले कर जीवन के अन्त तक अपना प्रत्येक क्षण संसार के उपकार में व्यतीत किया, जिसने विष पी कर हमें अमृत प्रदान किया, उस महान् ऋषि के अधूरे कार्य को पूरा करने का संकल्प करते हुए हम उन के अनुयायी उन्हें सच्ची श्रद्धाञ्जली अर्पित करें।

ऋषि-बोधोत्सव पर सभी देशवासियों को 'दयानन्दसन्देश' की ओर से हार्दिक शुभकामनाएँ।

❑❑

ओ३म्

वेद सब सत्यविद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।   महर्षि दयानन्द

वेदोपदेश इस मन्त्र में विद्वानों से पूछे गए पाँच प्रश्न हैं।

प्रजापतिः ऋषिः। प्रष्टा (जिज्ञासुः) देवता। निचृत् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः।।

पुनः प्रश्नानाह।।

विद्वानों से इस प्रकार प्रश्न करें, यह उपदेश किया है।

ओ३म्   कत्यस्य विष्ठाः कत्यक्षराणि कति होमासः कतिधा समिद्धः।
यज्ञस्य त्वा विदथा पृच्छमत्र कति होतारऽ ऋतुशो यजन्ति।।

(यजु० २३। ५७)

पदार्थ **(कति)** **(अस्य)** **(विष्ठाः)** विशेषेण तिष्ठति यज्ञो यासु ताः **(कति)** **(अक्षराणि)** उदकानि। अक्षरमित्युदकनाम **(निघं० १। १२)** **(कति)** **(होमासः)** दानाऽऽदानानि **(कतिधा)** कति प्रकारैः **(समिद्धः)** ज्ञानादिप्रकाशकाः समिद्रूपाः। अत्र छान्दसो वर्णागमस् तेन धस्य द्वित्वं सम्पन्नम् **(यज्ञस्य)** संयोगा- दुत्पन्नस्य जगतः **(त्वा)** त्वाम् **(विदथा)** विज्ञानानि **(पृच्छम्)** पृच्छामि **(अत्र)** **(कति)** **(होतारः)** **(ऋतुशः)** ऋतुमृतुं प्रति **(यजन्ति)** संगच्छन्ते।

सपदार्थान्वयः हे विद्वन् ! **(अस्य)** **(यज्ञस्य)** संयोगादुत्पन्नस्य जगतः **(कति)** **(विष्ठाः)** विशेषेण तिष्ठति यज्ञो यासु ताः? **(कति)** **(अक्षराणि)** उदकानि? **(कति)** **(होमासः)** दानाऽऽदा- नानि?**(कतिधा)** कतिप्रकारैः **(समिद्धः)** ज्ञानादि प्रकाशकाः समिद्रूपाः? **(कति)** **(होतारः)** **(ऋतुशः)** ऋतुमृतुंप्रति **(यजन्ति)** संगच्छन्ते? इत्यत्र विषये **(विदथा)** विज्ञानानि **(त्वा)** त्वाम् अहं **(पृच्छम्)** पृच्छामि।।

भाषार्थ : हे विद्वान्! इस **(यज्ञस्य)** संयोग से उत्पन्न जगत् के **(कति)** कितने **(विष्ठाः)** विशिष्ट स्थिति के आधार हैं? **(कति)** कितने **(अक्षराणि)** जल आदि निर्माण के साधन हैं? **(कति)** कितने **(होमासः)** लेन-देन अर्थात् व्यापार हैं? **(कतिधा)** कितने प्रकार के **(समिद्धः)** समिधा के तुल्य ज्ञान आदि के प्रकाशक हैं **(कति)** कितने **(होतारः)** व्यवहार करने वाले **(ऋतुशः)** प्रत्येक ऋतु में **(यजन्ति)** संग करते हैं? यह **(अत्र)** इस विषय में **(विदथा)** विज्ञान को **(त्वा)** तुझसे मैं **(पृच्छम्)** पूछता हूँ।।

भावार्थ : इदं जगत् क्व तिष्ठति? कत्यस्य निर्माण-साधनानि? कति व्यापारयोग्यानि? कतिविधं ज्ञानादिप्रकाशकम्? कति व्यवहर्त्तारः? इति पञ्च- प्रश्नाः, तेषामुत्तराण्युत्तरत्र वेद्यानि।।

भावार्थ : यह जगत् किसमें स्थित है? कितने इसके निर्माण के साधन हैं? कितने व्यापार के योग्य वस्तु हैं? कितने ज्ञान के प्रकाशक हैं? और कितने व्यवहार करने वाले हैं? ये पाँच प्रश्न हैं? इनके उत्तर अगले मन्त्र में समझें।।

(''दयानन्द-यजुर्वेद-भाष्य-भास्कर'' से उद्धृत, व्याख्याता स्व० श्री पं० आचार्य सुदर्शनदेव)

ये सहिष्णुता सिखाने वाले

(राजेशार्य आट्टा,मो0ः-09991291318)

प्रिय पाठकवृन्द! पिछले कई मास से देश में कई ऐसी घटनाएँ घट रही हैं, जिनका स्वरूप बदलकर कुछ लोगों द्वारा देश को या मोदी सरकार को बदनाम किया जा रहा है। राजनीति के लागों द्वारा कभी दलित और कभी अल्पसंख्यक के नाम पर समाज में जहर घोला जा रहा है। दादरी (उ० प्र०) में गोमाँस खाने का आरोप लगा कर कुछ शरारती तत्त्वों ने किसी मुस्लिम व्यक्ति को मार दिया। यह वास्तव में निन्दनीय था। पर उसकी आड़ में सम्पूर्ण हिन्दू समाज को और विशेषकर प्रधनमन्त्री श्री नरेन्द्र मोदी को असहिष्णु बताने वाले सम्मानधारी कलाकारों, साहित्यकारों ने सम्मान (जो वर्षों से अपने पास रखे थे) वापसी का नाटक कर संसार में भारत की छवि को ठेस पहुँचाई। उ० प्र० की अखिलेश सरकार के मन्त्री श्री आजमखान (जिन पर मामले को निपटाने की जिम्मेवारी थी) ने इस घटना को यू०एन० ओ० में ले जाने से भी परहेज नहीं किया। सेक्यूलर लोगों ने हिन्दुओं की भावनाओं को कुचलते हुए गोमाँस की पार्टियाँ दीं। आप सोचिये, एक अखलाक को मारना असहिष्णुता है, पर उसकी प्रतिक्रिया में हिन्दुओं को चिढ़ाने के लिए हजारों गायों को मारना कौन सी सहिष्णुता है? और विश्वस्तर पर देश की छवि बिगाड़ना कौन सी देशभक्ति है?

इस घटना पर उछल-उछल कर बयान देने वाले नेता मालदा (बंगाल) और पूर्णिया (बिहार) की घटना पर चुप क्यों रहे, जहाँ किसी हिन्दू युवक द्वारा पैगम्बर मुहम्मद के विरुद्ध बोलने पर लाखों मुस्लिमों ने थाने, दुकानों व वाहनों में आग लगा दी,जबकि आरोपित व्यक्ति को जेल में डाला जा चुका था। वहाँ सहिष्णुता का मुद्दा कहाँ चला गया?

रेवाड़ी के किसी गाँव में घर में आग लगने से दो बच्चे जल गये। मीडिया ने देश में असहिष्णुता का तूफान ला दिया। इसे सवर्णों द्वारा दलितों पर अत्याचार बताकर 'राजनीति' ने हरियाणा के मुख्यमन्त्री तक को वहाँ पहुँचने पर विवश कर दिया। लगभग २१ वर्ष खूब सोच-विचार कर राष्ट्रहित को प्राथमिकता देते हुए मत-परिवर्तन करने वाले डॉ० अम्बेडकर के नामलेवाओं ने धर्म-परिवर्तन की धमकी देने में एक मिनट भी नहीं लगाई। बदले में लाखों रुपए मुआवजे की माँग भी कर डाली। जब घटना का सच सामने आया कि घरेलू झगड़े के चलते आग कमरे के अन्दर से लगाई गई थी, तो चिल्लाने वाले सेक्यूलर बिलों में घुस गए। मीडिया झूठ का तो प्रचार करता रहा, सत्य पर कुछ नहीं बोला। शायद यही सहिष्णुता है!

जो लोग कई दशकों तक सत्तासीन रहे। सत्ताहीन होने पर वे पाकिस्तान भाग गये और पाकिस्तान के मुल्ला-मौलवियों से भारत के प्रधानमन्त्री श्री नरेन्द्र मोदी को हटाने की प्रार्थना करने लगे। इस देशद्रोहिता पर बीफपार्टी करने वाले सेक्यूलर मौन साध गए। गौडसे को हत्यारा कहकर निन्दा करने वालों और सेलूलर जेल (काला पानी) में वीर सावरकर की नामपट्टिका हटाने वालों की देशभक्ति जनता के सामने नंगी हो गई।

विपक्ष के सांसद श्री मल्लिकार्जुन खड़के ने भारत के गृहमन्त्री श्री राजनाथ सिंह को विदेशी बताते हुए सभी आर्यों को विदेशी कहा और बिहार के नेता श्री रघुवंश प्रसाद ने ऋषियों (हिन्दुओं के पूर्वजों) को माँसाहारी कहा, तो कथित आर्यसंन्यासी स्वामी अग्निवेश भी अदृश्य हो गए। जे०एन०यू० के देशद्रोही नारेबाजों का समर्थन करने वाली उनकी जीभ में छाले पड़ गए ? हाय! सत्य की हत्या को एक कथित संन्यासी कैसे सह गया ?
हैदराबाद विश्वविद्यालय में किसी छात्र ने आत्महत्या कर

ली, तो सेक्यूलर 'राजनीति' ने इसे भी दलितविरोधी कहकर केन्द्र सरकार पर मढ़ दिया,जबकि मृतक ने इसके लिए किसी को उत्तरदायी नहीं ठहराया था और मृतक का पिता घोषणा कर रहा है कि वह दलित नहीं पिछड़े वर्ग से है। पर यहाँ तो सेक्यूलरों का सेर्टिफिकेट चलता है। मीडिया उसी का प्रचार करता है। तथ्य सामने आया कि आतंकवादी याकूब मेनन की फाँसी का विरोध करने वाला और बीफपार्टी में लोगों को आमन्त्रित करने वाला मृतक छात्र छह मास पूर्व ही विश्वविद्यालय छोड़ चुका था। फिर भी केन्द्रीय शिक्षामन्त्री श्रीमती स्मृति ईरानी के त्यागपत्र की माँग की गयी। बेशर्म राजनीति वहाँ भी राजनीति ढूँढ़ने चली गई, जबकि उसी समय देश की सीमा पर आतंकवादियों की गोलियों से शहीद हुए कर्नाटक के केप्टन निरंजन का शव बंग्लौर पहुँचा था, उसे श्रद्धाँजलि देने का वक्त इन धरना धरने वाले नेताओं के पास नहीं है। शयद यही देशभक्ति है! इस बेशरमी पर सम्मानधारी साहित्यकार मौन क्यों रहे?

जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, दिल्ली में वहाँ के छात्रों द्वारा लगाए गए भारत की बर्बादी के नारे सुनकर पूरे देश में आक्रोश है। दोषी छात्रों पर अंकुश लगाने पर कांग्रेस के उपाध्यक्ष मोदी सरकार पर युवाओं की आवाज दबाने का आरोप लगाते हैं। कांग्रेस के नेता इसे बच्चों की शरारत कहकर उपेक्षा करते हैं। वृन्दा कारत जैसी कम्यूनिस्ट इसे विचारों की स्वतन्त्रता छीनना बताती है। स्वामी अग्निवेश भी अपने आपको रोक नहीं पाए और संघ व भाजपा पर जे०एन०यू० की उच्च परम्परा को बदनाम करने का आरोप लगा दिया। इससे पूर्व भी वे संन्यासी वेश में छिपा अपना कम्यूनिस्ट चेहरा सामने ला चुके हैं और देश की जनता सब जानती है। समझ नहीं आता कि एक संन्यासी देशद्रोहियों का समर्थक कैसे हो सकता है।

पाकिस्तान के आतंकवादियों की बोली बोलने वाले 'मासूम बच्चों' के समर्थन में भाषण देने वालों के मुख से सियाचीन ग्लेशियर में शहीद हुए (दस) जवानों को श्रद्धांजलि देने के लिए दो शब्द भी नहीं निकले। सत्ता-पक्ष को गाँधी का हत्यारा बताने वालों की देशभक्ति तो देखिए!

अभी आरक्षण की माँग करते हुए जाटों ने आन्दोलन किया। कथित जाति के आधार पर आरक्षण व्यक्ति की प्रगति का बाधक और देश का विनाशक है। डॉ० अम्बेडकर ने राजनीति के दबाव में आकर इसे १० वर्षों के लिए स्वीकार किया था। वोटों के लालच में यह बढ़ता रहा। प्रतिभाशाली पिछड़ते रहे और अयोग्य आरक्षण की वैसाखी लेकर आगे बढ़ते रहे। इस अन्याय के विरुद्ध आक्रोश होना स्वाभाविक था। पर १७-२२ फरवरी के बीच इस आन्दोलन की आड़ में असामाजिक तत्त्वों ने हरियाणा में जिस तरह रेलवे स्टेशन, पुलिस थाने जलाए , बसें फूँकीं, घरों व निजी वाहनों को आग लगा दी, दुकानें लूटीं व ए०टी०एम० तोड़े, वह किसी पागलपन से कम नहीं था। अपनों की गोलियाँ अपनों के सीने पर चलीं। इसी समय कश्मीर में जीन्द के २३ वर्षीय जवान कैप्टन पवन कुमार शहीद हो गए। डीजे बजाकर नाचने वाले आन्दोलनकारियों के पास शहीद की शहादत को प्रणाम करने की भावना का अभाव सा दिखाई दिया। राजनीति के षड़यन्त्र ने समाज के भाईचारे में भी जहर घोल दिया।

प्रसिद्ध क्रान्तिकारी शचीन्द्रनाथ सान्याल ने (१६३८ ई०) अपनी पुस्तक 'बन्दी जीवन' में लिखा है-''सभी बड़े-बड़े आन्दोलनों में देखा गया है कि साधु और महान चरित्रवान पुरुषों के साथ कुछ नरपिशाच भी दल में आ मिलते हैं। यह आन्दोलनों का दोष नहीं है, यह तो हमारे मनुष्य-चरित्र का दोष है। शायद लेनिन ने भी कहा था कि प्रत्येक सच्चे बोलशेविक के साथ कम से कम उन्तालीस बदमाश और साठ मूर्ख उनके दल में मिल गए थे । और मैंने श्रद्धेय शरत्चन्द्र चट्टोपाध्याय जी से सुना है कि देशबन्धु दास ने भी कदाचित कहा था कि वकालत करते-करते हम बुड्ढे हो गए और इस बीच हमको बड़े-बड़े

शेष पृष्ठ ८ पर

अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता या देशद्रोह

(धर्मपाल आर्य)

गत माह (फरवरी) की नौ तारीख को मैं भारत के इतिहास का काला दिवस कह सकता हूँ, क्योंकि इस दिन अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता की आड़ में देशद्रोह का जो नंगा नाच हुआ, उसका दूसरा उदाहरण मिलना कठिन है। नौ फरवरी को सांस्कृतिक कार्यक्रम के नाम पर जिस प्रकार देशद्रोह के नारे लगाए गए, उनको सुनकर/पढ़कर देश के प्रत्येक देशभक्त नागरिक का खून खौलने लगेगा। मुझे आश्चर्य होता है कि सांस्कृतिक कार्यक्रम के नाम पर किये जाने वाले राष्ट्रविरोधी अभियान में लगाए जाने वाले देशद्रोही नारों को हमारे कुछ राजनेता बड़ी निर्लज्जता से अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता का नकाब ओढ़ाने की कोशिश में लगे हैं। मैं अपने पाठकों को बता दूँ कि जिसे सांस्कृतिक कार्यक्रम कहा जा रहा है, वह सांस्कृतिक कार्यक्रम न होकर देश की संसद पर हमले के दोषी (जिसे फाँसी की सजा हुई थी) अफजल गुरु की बरसी पर उसे श्रद्धांजलि देने के लिए आयोजित सभा थी, जिसमें अफजल गुरु को शहीद कहा गया और उसके सपनों को साकार करने का संकल्प दोहराया गया। मुझे अत्यन्त दुःख के साथ लिखना पड़ रहा है कि यह कार्यक्रम किसी छोटी-मोटी जगह पर आयोजित न होकर उस विश्वविद्यालय के परिसर में हुआ,जिसका नाम भारत के प्रथम प्रधानमन्त्री पं० जवाहरलाल नेहरू के नाम पर है और जिसका नाम दुनियाभर में बड़े आदर के साथ लिया जाता है। जिस प्रकार की वहाँ नारेबाजी हुई, उसके कुछ नमूने मैं अपने पाठकों के समक्ष रखता हूँ। ''भारत की बरबादी होगी,इन्शा अल्लाह इन्शा अल्लाह। भारत की बरबादी तक, जंग रहेगी-जंग रहेगी। तुम कितने अफजल मारोगे, हर घर से अफजल निकलेगा। मकबूल माँगे आजादी। अफजल माँगे आजादी। तुम न दोगे आजादी तो छीन के लेंगे आजादी।''इस प्रकार के देशविरोधी नारे वहाँ लगाए गए। होना तो यह चाहिए था कि जिन्होंने इस देशद्रोही कार्यक्रम को आयोजित किया, उनके खिलाफ सख्त कार्यवाही हो और जिन्होंने इस कार्यक्रम को करने की इजाजत दी, उनसे भी जबाव माँगा जाता लेकिन हुआ ठीक इसके विपरीत। हमारे कई नेता बड़ी बेशर्मी से कह रहे हैं कि यह तो अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता है, जो कि उसे संविधान ने मौलिक अधिकार के रूप में प्रदान की है। जो इस राष्ट्रविरोधी गतिविधि में संलिप्त थे, उनके लिए हमारे कुछ नेता कवच बनने का काम कर रहे हैं और बिना सोचे-समझे कुछ का कुछ बयान दे रहे हैं। जैसे कि एक ने कहा कि वह एक वर्गविशेष (मुसलमान) का है, इस कारण उसे निशाना बनाया जा रहा है। इससे पूर्व कि इस विषय पर मैं आगे कुछ लिखूँ, अपने प्रबुद्ध पाठकों को बता दूँ कि पण्डित नेहरू के नाम से प्रसिद्ध उक्त विश्वविद्यालय में हमेशा से वामपन्थी विचारधारा का बोलबाला रहा है, जिसके कारण यहाँ अन्य विचारधारा की कोई अहमियत नहीं है। यहाँ पढ़ने और पढ़ाने वाले दोनों पर ही वामपन्थी अथवा मार्क्सवादी विचारधारा हावी रहती है। विद्यालय-महाविद्यालय और विश्वविद्यालय शिक्षा के, संस्कारों के, चरित्रनिर्माण और श्रेष्ठ आदर्शों के केन्द्र माने जाते रहे हैं। उक्त विद्या के संस्थानों से समाज को संस्कारित तथा देशभक्ति से ओत-प्रोत नागरिकों के निर्माण की आशा होती है। यही कारण है कि सरकार उक्त संस्थानों को सफलतापूर्वक संचालित करने के लिए अरबों रुपए का वार्षिक बजट निर्धारित करती है, इसके बाद यदि इन संस्थानों में राष्ट्रविरोधी तत्त्व पलते हैं, तो सरकार द्वारा संचालित ऐसे संस्थानों का क्या लाभ? क्या सरकार अरबों रुपए इसलिए व्यय कर रही है कि उसमें राष्ट्र की एकता, अखण्डता और अस्मिता को चुनौती देने वाले तत्त्व पैदा हों? क्या सरकार उन संस्थानों में पढ़ने वालों को इसीलिए सुविधा प्रदान कर रही है कि उन संस्थानों में

देश-विरोधी नारे लगाए जाएँ। नौ फरवरी को हुए कार्यक्रम में जिन लोगों के नाम सामने आए हैं, उनको देखकर ऐसा बिल्कुल नहीं लगता कि उन्हें देशद्रोह, राजद्रोह व अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता की परिभाषा का न पता हो अथवा इनमें अन्तर मालूम न हो। प्रो० ए०एस०आर० गिलानी, मोहम्मद उमर खालिद तथा कन्हैया कुमार आदि उस कार्यक्रम के ऐसे चेहरे हैं, जिन्होंने राष्ट्रविरोधी नारे लगाने वालों का न केवल नेतृत्व किया, अपितु स्वयं भी आगे आकर बढ़-चढ़ कर नारेबाजी की। इसके बाद भी उमर खालिद के पिता का यह कहना -'' उसे मुसलमान होने की सजा दी जा रही है।'' अत्यधिक हैरान कर देने वाला है। टी०वी० पर अपने पुत्र द्वारा लगाए गए राष्ट्रविरोधी नारों को सुनकर तथा संसद पर हमले के दोषी अफजल गुरु की हिमायत सुनकर भी उन्हें अपना पुत्र निर्दोष दिखाई दे रहा है, परन्तु यह सम्भव है क्योंकि खालिद के पिता के लिए देशप्रेम से बढ़कर पुत्रप्रेम है। मुझे लगता है कि खालिद के पिता के लिए अपने पुत्र के सामने देशप्रेम के कोई मायने नहीं हैं, यदि थोड़ा सा भी देशप्रेम होता, तो अपने बेटे की करतूत पर दुःखी होता/शर्मिन्दा होता और देश से माफी माँगता। मुझे पुत्र से अधिक उस पिता की सोच पर तरस आता है, जो अपनी सन्तान की राष्ट्रविरोधी हरकतों पर शर्मिन्दा होने की अपेक्षा उसे दूसरा ही रंग देने की कितनी निर्लज्जता से कोशिस करता है, जब खालिद व उसके साथी कन्हैया कुमार पर कार्यवाही की कोशिस हुई तो एक बड़ी पार्टी के एक बड़े नेता का एक बड़ा बयान आया कि विश्वविद्यालय में सरकार छात्रों की आवाज को दबाकर उनके लोकतांत्रिक अधिकार का हनन कर रही है। भारत की बर्बादी के नारे लगाने वालों पर तथा राष्ट्रविरोधी अभियान छेड़ने वालों पर की जाने वाली कार्यवाही कुछ नेताओं को संवैधानिक, मौलिक अधिकारों का हनन नजर आता है, तो ऐसे नेताओं की राजनीतिक दूरदर्शिता या अदूरदर्शिता का अथवा राजनीतिक परिपक्वता या अपरिपक्वता का निर्णय पाठक स्वयं कर सकते हैं। हमारी राजनीति में देशद्रोहियों के प्रति सहानुभूति रखने वाले किस प्रकार के समाज व राष्ट्र का निर्माण करेंगे? इसका सहज अनुमान लगाया जा सकता है। जे०एन०यू० में आयोजित राष्ट्रविरोधी कार्यक्रम की काली छाया का असर यह हुआ कि पश्चिमी बंगाल के जादवपुर विश्वविद्यालय में भी राष्ट्रविरोधी नारे लगाए गए। लेकिन अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय ने उपरोक्त विश्वविद्यालयों में आयोजित राष्ट्रविरोधी कार्यक्रमों का खुलकर विरोध करने का जो साहस दिखया है, इसके लिए मैं वहाँ के छात्रों, शिक्षकों तथा विश्वविद्यालय प्रशासन की प्रशंसा करता हूँ। इस सन्दर्भ में कई महानुभावों ने मुझसे प्रश्न किया कि इस प्रकार का कार्य क्या अनायास हो गया? इस प्रश्न का मेरा उनको एक ही उत्तर था कि यह कार्यक्रम न तो अनायास था और न ही सामान्य; जब कार्यक्रम सामान्य नहीं था, तो उसको आयोजित करने की तैयारी भी सामान्य नहीं थी और न ही सामान्य लोगों की उस तथाकथित सांस्कृतिक कार्यक्रम में हिस्सेदारी थी। उसे सांस्कृतिक कार्यक्रम का नाम देना भी सामान्य नीति का हिस्सा नहीं था। संसद पर हमले के आरोप में गिरफ्तार जे०एन०यू का प्रो० गिलानी जो सबूतों के अभाव में मामले से बरी हो गया था, उसकी जब इस गतिविधि में हिस्सेदारी है तो जाहिर है कि सब कुछ सामान्य नहीं है। इस के बाद राष्ट्रविरोधी गतिविधि में संलिप्तों के खिलाफ सरकार जब कार्यवाही की मुद्रा में आयी, तो अनेक तथाकथित धर्मनिरपेक्षवादी चेहरे धर्मनिरपेक्षता का घिनौना नकाब पहनकर उन देशद्रोहियों के पैरोकार बन कर खडे हो गये, तो जाहिर है सब कुछ योजनाबद्ध तरीके से चल रहा है तथा इस राष्ट्रविरोधी गतिविधि की पटकथा बहुत पहले से गिलानी जैसे शातिर दिमागों द्वारा लिखी जा रही थी। जो छात्र संगठन, जो अध्यापक संगठन तथा जो भी राजनीतिक दल ऐसे राष्ट्रद्रोही कार्यक्रमों का अथवा राष्ट्र-विरोधी गतिविधियों को आयोजित करने वालों का और उनमें शामिल होने वाले छात्रों का प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष समर्थन कर रहे हैं, वे सीधे-सीधे राष्ट्र में अराजकता फैलाने वालों को प्रोत्साहित कर रहे हैं, जो अराजकता को प्रोत्साहित कर रहे हैं, वे राष्ट्र के साथ विश्वासघात कर रहे हैं। जिस कार्यक्रम में राष्ट्र के विभाजन का सपना संजोया

जाता हो और देशविरोधी इबादत लिखी जाती हो और उसे अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता का नाम दिया जाता हो तथा मामले को राजनीतिक तूल दिया जाता हो, इस प्रकार के आचरण सन्देह के घेरे में आते हैं। क्षुद्र राजनीतिक स्वार्थों की पूर्ति के लिए जिस प्रकार का आचरण हमारे कुछ राजनीतिक दलों द्वारा किया जा रहा है, वह घोर निन्दनीय है। जब देश की एकता, अखण्डता व अस्मिता की बात आये, तो सभी को अपने मतभेद भुलाकर राष्ट्रविरोधी तत्त्वों के खिलाफ एकजुट होकर उनका न केवल सामना करना चाहिए अपितु उनका मुहँतोड जवाब भी देना चाहिए। वेद का आदेश है -

संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।
देवा भागं यथा पूर्वे सं जानाना उपासते।

अर्थात् राष्ट्रहित में आप सबके मन समानता वाले हों। एकता के सूत्र में बँधते हुए आप उसी सुख भाग को प्राप्त करो, जिसे देवगण प्राप्त करते रहे हैं।

माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः अर्थात् भूमि मेरी माता है और मैं उसका पुत्र हूँ। प्रो० इन्द्र विद्या वाचस्पति जी लिखते हैं- **''यस्यान्नतोयैः परिवर्धितोऽहं, यत्पुण्यभूमौ विहरामि नित्यम् यदर्थमिच्छामि वपुर्विमोक्तुं, स मे प्रियो भारत भव्य देशः।।''** अर्थात् जिसके अन्न, जल से पलकर मैं बडा हुआ हूँ, जिस पुण्यभूमि में मैं नित्य विचरण करता हूँ और जिसकी एकता, अखण्डता व अस्मिता की रक्षा के लिए अपना सर्वस्व न्यौछावर करना चाहता हूँ, ऐसा भारत देश मुझे प्राणों से भी प्रिय है। प्रो० एस०ए०आर० गिलानी, उमर खालिद, साहिब कन्हैया कुमार, आशुतोष कुमार, अनन्त प्रकाश, रामा नागा और अनिर्वान भट्टाचार्य आदि राष्ट्र के विरोध में कार्यक्रम आयोजित करने के दोषी हैं, इनको इनके अपराध का दण्ड अवश्य मिलना चाहिए। अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता का यह मतलब नहीं कि सांस्कृतिक कार्यक्रम की आड़ लेकर जिस देश में आप रहते हैं, उसी के खिलाफ जहर उगलें। महाभारत के अनुसार राजधर्म भी यही कहता है-

यदासर्वं वाचा कायेन कर्मणा।
पुत्रस्यापि न मृष्येच्च स राज्ञो धर्म उचयते।।

अर्थात् जब राष्ट्र की वाणी से, शरीर से और कर्मकौशल से राजा रक्षा करता है तथा अपराध होने पर अपने पुत्र को भी क्षमा नहीं करता है, उसे ही राजधर्म कहा जाता है। अफजल गुरु को नायक बताने वालों को, देश के विभाजन का सपना देखने वालों को, विद्या के पावन मन्दिर विश्व विद्यालय जैसे पावन केन्द्रों में नफरत का जहर घोलने वालों को उपरोक्त अवांछनीय तत्वों को प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष प्रोत्साहित करने वालों को जितना जल्दी उचित दण्ड दिया जाए, राष्ट्र हित का यही तकाजा है।

त्रायते हि सदा सर्वं वाचा कायेन कर्मणा।

पृष्ठ ५ का शेष

धोखेबाजों से भी वास्ता पड़ा, किन्तु असहयोग आन्दोलन में हमने जितने धोखेबाज आदमी देखे, वैसे जिन्दगी-भर में नहीं देखे थे।''(पृष्ठ-८१)

अंग्रेजों के राज में भी देश के लोग ऐसे ही थे और आजादी के ६८ वर्ष बाद भी ऐसे ही हैं, फिर हम देश के लिए कब जीयेंगे? जब तक राष्ट्रवाद की अपेक्षा मत, मजहब, जाति, पार्टी या व्यक्ति के स्वार्थ को प्राथमिकता दी जाती रहेगी, तब तक देश प्रगति नहीं कर सकता। राष्ट्रहित को प्राथमिकता दिये बिना देशद्रोह की परिभाषा निर्धारित नहीं की जा सकती। मेवाड़ की बेटी विद्युल्लता न जहाजों में बैठकर देश-विदेश में घूमी थी, न उसने किसी विश्वविद्यालय से राजनीति में पी०एच०डी० की थी। फिर भी वह जानती थी कि चित्तौड़ पर आक्रमण करने वाले अलाउद्दीन खिलजी के सैनिकों के साथ मिला उसका होने वाला पति देश का गद्दार है। अतः उसने गद्दार की पत्नी होने की अपेक्षा अपनी छाती में कटार मारकर मृत्यु का आलिंगन करना श्रेष्ठ समझा। यदि सेक्यूलर देश ने इस इतिहास को साम्प्रदायिक न कहा होता, तो पठानकोट (पंजाब) के आतंकवादी हमले में पुलिस अधिकारी(एस०पी०) का नाम सन्देह के दायरे में न होता। महाराणा प्रताप, शिवाजी से प्रेरणा लेकर वियतनाम ने अमेरिका के घुटने टिकवा दिये और हम उन्हें साम्प्रदायिक कहकर सेक्यूलर बन गए। शायद यही सहिष्णुता है!

पृथिवी गाय का बछड़ा है अग्नि।

(पं० रामनिवास गुणग्राहक, सूरौता-भरतपुर)

सायंकाल की गोधूलि बेला है। दिन भर जंगल में हरी-भरी घास खाकर शीतल झरनों का मधुर जल पीकर घर की गौशाला की ओर मुँह उठाये गायें दौड़ी चली आ रही हैं। इधर गौशाला में बलिष्ठ बछड़े रस्सी तुड़ा रहे हैं। जैसे-जैसे घर निकट आ रहा है, गाएँ रम्भाने लगती हैं और गौ की ममताभरी यह पुकार जैसे ही बछड़ों के कानों से टकराती है, बछड़ों की किलकारी व किलोलें भी बढ़ जाती हैं। गोपाल के घर में भी तैयारियाँ होने लगती हैं कि गायें आ रही हैं, बछड़े भी आतुर हो रहे हैं, जब बछड़े अपनी माँओं का दूध पीकर तृप्त हो जाएंगे, तो हम गायों को दुह कर गोरस का पान करेंगे। अरे! यह क्या गायें तो आ गईं। देखो! बछड़े कैसे आनन्दित होकर अपनी माँओं का स्तनपान कर रहे हैं और गौमाता भी कैसी वात्सल्यभरी दृष्टि से अपने हृदय की करुणा बरसा रही हैं। लो, बछड़े तृप्त हो गये और शेष दूध को प्रसन्नचित्त गोपाल अपनी बटलोई में दुहकर ला रहा है। गोपाल के बच्चे छोटे-छोटे पात्र लेकर धारोष्ण दूध पीने के लिए उतावले हो रहे हैं। घर में बड़ा ही आनन्ददायक वातावरण है, घर के सब सदस्य स्वस्थ, सबल, सदाचारी और सात्त्विक प्रवृत्ति के धनी हैं। इस घर के निकट ही एक दूसरा घर है, एक दुर्बल सी गाय उस घर में भी प्रवेश करती है, मगर उसके अन्दर से बछड़े की किलकारी व किलोलें जैसे कुछ संकेत नहीं मिल रहे। पता चला कि इस स्वार्थी गोपाल ने गाय के बछड़े के लिए पर्याप्त दूध न दिया, बछड़ा दुर्बल होकर मर गया। बिना बछड़े के गाय का मातृत्व भी जाता रहा, उसके स्तन सूख गए। इस गोपाल ने जैसे-तैसे उसके सूखे स्तनों कों खींचकर मातृत्वभाव से रहित थोड़ा दूध निकाला और अपने बच्चों को थोड़ा-थोड़ा देकर चलता कर दिया। इस घर में कोई रौनक नहीं, कोई सरसता नहीं, बस जी रहे हैं। क्या बात है, गाय तो यहाँ भी है, केवल एक बछड़े के न रहने पर इतना बड़ा अन्तर क्यों? विचारशील आर्यबन्धुओ! आप नहीं समझे। मैं वेदोक्त और उसके बछड़े की बात कर रहा हूँ। कैसी है वेदोक्त गौ? कैसा है उसका बछड़ा? आओ देखें।

ओं पृथिवी धेनुस्तस्या अग्निर्वत्सः।
सा मेऽग्निना वत्सेनेषमूर्जं कामं दुहाम्।
आयुः प्रथमं प्रजां पोषं रयिं स्वाहा।।

(अथर्व-४.३९.२)

पदार्थ :- पृथिवीधेनुः- भूमि गाय है, तस्याः अग्निः वत्सः- उसका अग्नि बछड़ा है। सा मे- वह भूमि मेरे लिए, अग्निना वत्सेन- अग्निरूपी बछड़े के द्वारा, इषम् ऊर्जम् कामम्- अन्न तथा रस पर्याप्त रूप में (मेरी कामनानुसार), दुहाम्- दुहे (देवे)। प्रथमं आयुः- प्रथम कोटि की आयु (उच्च जीवन), प्रजां पोषम्- प्रजा, पुष्टि और रयिम्- धन भी देवे, स्वाहा- यह मेरी इच्छा पूर्ण हो।

देखा! वेद की विचित्र गौ और उसका विलक्षण बछड़ा! अरे, उसका तो दूध भी दिव्य है, निराला है! आर्यो! ऊपर हम जिन दो गौपालकों के घर की झाँकी दिखा रहे थे, उनमें से कौन सा घर आपको अच्छा लगा? निस्सन्देह वही, जिसमें गौ के बछड़े जीवित ही नहीं, बल्कि इतने परिपुष्ट हैं कि अपनी किलोलों से रस्सी तुड़ाने का प्रयास कर रहे हैं। बछड़े वाले घर में गाय भी ममता लुटाती, रम्भाती हुई आती है और बटलोई भर कर दूध देती है। दूसरी ओर बछड़े के बिछोह में गाय स्वयं दुर्बल और वात्सल्यशून्य होकर दोहन के नाम पर क्रूर शोषण का शिकार बनी हुई है। उसके सूखे थनों में जो थोड़ा बहुत दूध खींच-भींच (दबा) कर निकाला जाता है, उसमें ताजगी नहीं है, ममता नहीं है।

आर्यो! यह सच है कि हमें बछड़े वाली गाय जिस घर में है, वह अच्छा लग रहा है, मगर इससे भी बड़ा सच यह है कि हम सब प्रायः उस दूसरे घर के भाग्यहीन

सदस्य हैं, जिस घर की गाय का बछड़ा मर चुका है या घर वालों ने अपनी बढ़ी हुई भोगेच्छा के कारण मार दिया है। गाय तो आप समझ गये, बछड़ा क्या है, यह समझ लोगे तो हमें पता चल जाएगा कि हम पहले घर के सदस्य क्यों नहीं हैं? निराश होने की बात नहीं, हम पहले घर में भी प्रवेश पा सकते हैं, उसके लिए आपको बछड़ा जीवित करना होगा। क्या मृत बछड़े पुनः जीवित हो जाते हैं? हाँ-हाँ, क्यों नहीं। पृथिवी रूपी गाय का अग्निरूपी बछड़ा ऐसा ही है। अब उसका पूरा परिचय जानना चाहते हो तो सुनो, वह बछड़ा अग्निहोत्र है। अग्निहोत्ररूपी बछड़े के माध्यम से ही इस पृथ्वी रूपी विश्वम्भर गौ का समुचित दोहन किया जा सकता है। यजुर्वेद में आता है-

'पूर्णा दर्वि परा पत सुपूर्णा पुनरापत।
वस्नेव विक्रीणावहाऽइषमूर्ज॑ꣳशतक्रतो!!"(यजु०३.४६)

मंत्र में कहा है कि घृतादि हव्यद्रव्यों से पूरी तरह भरी हुई कड़छी (स्रुवा, चम्मच) जब यज्ञाग्नि में डाली जाती है, तो यह उससे कहीं अधिक होकर लौटती है। हे शतक्रतो! आपकी कृपा से हमारा यह यज्ञ अन्नादि पदार्थों व पराक्रम का देने वाला हो! प्रस्तुत मंत्र में भी उसी 'इषम्' और 'ऊर्जम्' को इच्छानुसार देने, दुहने की बात कही है। अग्निहोत्ररूपी बछड़ा जब पृथ्वीरूप गौ का पूरी मस्ती के साथ स्तनपान करता है, तो वह गायरूपी पृथ्वी ऐसे ही अनमोल रत्नों को प्रकट करती है। हे मनुष्यो! हे आर्यो! वेद पर विश्वास करो। यदि हम अन्न, बल-पराक्रम के साथ उच्च स्तर का श्रेष्ठ जीवन, सुसन्तान सब प्रकार की पुष्टि तथा धन-ऐश्वर्य पाना चाहते हैं, तो इन सबको प्रदान करने वाली पृथ्वीरूपी गौ के लाड़ले-दुलारे बछड़े अग्निहोत्र का सेवन करो। जिन परिवारों में यज्ञाग्निरूपी बछड़ा किलोलें करता रहता है, घृतादि से भरी हुई कड़छियाँ (चम्मचें) जहाँ देवों के मुख अग्नि में श्रद्धासहित नित्य डाली जाती हैं, वहाँ धन-धान्य, बल-पराक्रम की कमी नहीं रहती। यजुर्वेद के अठारहवें अध्याय में यज्ञ से मिलने वाले पदार्थों का विस्तृत वर्णन है। यज्ञप्रेमी जन उसे पढ़कर आनन्द लाभ ले सकते हैं, यज्ञ के प्रति श्रद्धा अनुराग बढ़ा सकते हैं। हम यहाँ अथर्ववेद के तीसरे काण्ड के २१वें सूक्त के यज्ञ सम्बन्धी कुछ रोचक मंत्रों के यज्ञ-पोषक विचार रखना चाहते हैं।

"जो अग्नियाँ जलों में हैं, जो अग्नि मेघ में, पुरुष में, पाषाण में है, जो अग्नि औषधियों और वनस्पतियों में प्रविष्ट है, उन अग्नियों को यह आहुति है।"(१)

"जो अग्नि सोम के अन्दर है, गौओं के अन्दर है, जो अग्नि पक्षियों और मृगों में प्रविष्ट है, जो अग्नि द्विपादों और चतुष्पादों में आविष्ट है, उन अग्नियों को यह आहुति है।" (२)

"जो अग्नियाँ द्युलोक में, अन्तरिक्ष लोक में, पृथ्वीलोक में तथा विद्युत में संचार करती हैं, जो अग्नियाँ प्रजाओं के अन्दर और वायु के अन्दर संचारित होती हैं, उन अग्नियों के लिए यह आहुति है।" (७)

इन मंत्र-भावों से यह स्पष्ट होता है कि हमारा यज्ञ इन सबके लिए लाभ व वृद्धि का कारण बनता है। जहाँ तक 'प्रथमं आयुः' श्रेष्ठ जीवन की बात है, तो ऋग्वेद में एक मंत्र आता है-

''यज्ञं इन्द्रमवर्धयद्यद्भूमिं व्यवर्तयत्।
चक्राण ओपशं दिवि"।। (८.१४.५)

अर्थात् यज्ञ मनुष्य को बढ़ाता है, उसकी हृदय भूमि को विशाल बनाता है।

लौकिक वृद्धि और विशाल हृदयता, ये दोनों जिसके जीवन में होंगी, वो क्योंकर श्रेष्ठ जीवन का धनी न होगा? लो, प्रजा की बात करें-

'इह प्रजां जनय पत्ये अस्मै सुज्यैष्ठ्यो भवत् पुत्रस्त एषः"। (अथर्व-१४.२.२४)

यहाँ पति के साथ बैठकर नित्य यज्ञ करने वाली पत्नी के लिए कहा है कि ऐसी नारी पति के लिए जो सन्तान देती है, वह श्रेष्ठ गुण वालों में भी ज्येष्ठ (सर्वोपरि) होता है। यज्ञ से श्रेष्ठों में भी ज्येष्ठ सन्तान की प्राप्ति की बात कहकर यह मंत्र भी पूर्वोक्त मंत्र का प्रबल समर्थन कर रहा है। अग्निरूपी बछड़े की पृथ्वीरूपी माँ से इस मंत्र में जिन वस्तुओं को दुहने, देने की प्रार्थना की है, उनकी प्राप्ति अग्निहोत्र (यज्ञ) के माध्यम से होने की बात अन्य मंत्रों में भी आती है-

शेष पृष्ठ १६ पर

काशी शास्त्रार्थ महोत्सव संस्मरण

(डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे,लातूर-413531)

काशी के दुर्गाकुण्ड आनन्दबाग में जहाँ सन् १८६९ में स्वामी दयानन्द सरस्वती का चालीस पौराणिक विद्वानों के साथ मूर्तिपूजा पर शास्त्रार्थ हुआ था, उस ऐतिहासिक स्थली पर मुझे जाने का अवसर प्राप्त हुआ, वह एक अविस्मरणीय घटना थी। मैं लातूर से पुणे होकर वाराणसी पहुँचा, जहाँ १४६वाँ शास्त्रार्थ महोत्सव होने जा रहा था। आर्य उपप्रतिनिधि सभा वाराणसी द्वारा आयोजित इस माहेत्सव में एक वक्ता के रूप में मुझे आमन्त्रित किया गया था। पहले दिन श्री प्रमोद जी आर्य की व्यवस्था निर्देशानुसार मैं भोजूवीर आर्यसमाज काशी में रुका। दूसरे दिन दुर्गाकुण्ड के समीप आनन्द बाग में जहाँ कार्यक्रम निश्चित था अन्य विद्वानों के साथ पहुँचा, जहाँ आर्यजगत् के जाने-माने विद्वान् पधारे थे, उनमें हरियाणा के स्वामी सुरेन्द्रानन्द, कानपुर के प्रसिद्ध भजनोपदेशक श्री रवीन्द्रकुमार आर्य, रेवाड़ी हरियाणा की श्रीमती सुनीता शास्त्री, स्वामी केवलानन्द प्राध्यापक श्री शिवनारायणसिंह गौतम तथा अमेठी से पधारे डॉ. प्रशस्यमित्र जी आदि प्रमुख थे।

दुर्गाकुण्ड के समीप जहाँ स्वामी दयानन्द जी ने वेदों में मूर्तिपूजा है वा नहीं? इस विषय पर काशी के विद्वानों से शास्त्रार्थ किया था, उस मिट्टी को स्पर्श करके मैं सिहर उठा और स्वयं को धन्यभागी होने का अनुभव करने लगा। मैं काशी-शास्त्रार्थ पर पुस्तक लिखने विषय में खोजपूर्ण साहित्य पढ़ चुका हूँ और बहुत सारा लिख भी चुका हूँ, इस दृष्टि से भी यह यात्रा मेरे लिए उपादेय सिद्ध हुई। मैंने आनन्दबाग में वह स्थान देखा, जहाँ काशीराज महाराजा ईश्वरी प्रसाद नारायणसिंह की उपस्थिति में यह ऐतिहासिक शास्त्रार्थ हुआ था। वह परिदृश्य देखकर मैं अनुभव करने लगा कि किस तरह स्वामी जी चारों ओर से काशी के पौराणिक शास्त्रार्थ महारथियों से घिरे हो कर भी उनके चक्रव्यूह को तोड़कर बाहर निकले और विश्वविजयी हुए। यह अनुभव इसलिए भी महत्वपूर्ण था, कि यहाँ आने से पूर्व स्वामीजी को कोई नहीं जानता था। काशीशास्त्रार्थ में विजयी होने के बाद ही उनकी गणना विश्वस्तर पर वेदों के उद्‌भट विद्वानों में होने लगी। काशीशास्त्रार्थ में दिग्विजय प्राप्त करने के पश्चात् उन्हें देश के अनेक भागों से व्याख्यानों के लिए आमन्त्रित किया जाने लगा। ब्राह्मसमाज के नेता देवेन्द्रनाथ ठाकुर ने कोलकाता आने के लिए बहुत आग्रह किया। उस समय ब्रिटिश भारत की राजधानी कोलकाता थी। कोलकाता से स्वामी दयानन्द जी की दिग्‌दिगन्त प्रसिद्ध होने लगी। मैंने दिनांक २१/११/२०१५ के भाषण में महाराष्ट्र और काशी का ऐतिहासिक सम्बन्ध दर्शाते हुए कहा कि स्वामी जी ने सन् १८६९ में शास्त्रार्थ से काशी जीतकर तथा सन् १८७५ में महाराष्ट्र के मुंबई में आर्यसमाज की सर्वप्रथम स्थापना कर सामाजिक और धार्मिक सुधार के क्षेत्र में संपूर्ण विश्व को जीत लिया।

मुंबई अंग्रेजों की खुली सोच वाली नगरी रही है तथा महाराष्ट्र के समाज सुधारकों की कर्मस्थली भी रही है। स्वामीजी के इन कार्यों को अंग्रेजों और समाजसुधारकों ने खुले मन से सराहा है।

महाराष्ट्र और काशी का सम्बन्ध सर्व प्रथम इस कारण से भी दृढ़ रहा है कि सत्रहवीं शती में छत्रपति शिवाजी के जीवन की महत्वपूर्ण घटना भी काशी से जुड़ी हुई है। हुआ यह था कि महाराष्ट्र के कर्मकाण्डी ब्राह्मणों ने छत्रपति शिवाजी के राज्याभिषेक का विरोध किया था। शिवाजी महाराज के क्षत्रियत्व पर सवाल उठाते हुए उन्होंने राजसिंहासनारूढ़ होने के उनके अधिकार पर प्रश्नचिन्ह उपस्थित किया लेकिन काशी

शेष पृष्ठ २७ पर

सरमा पणि संवाद - एक विवेचन

(उदयन आर्य (पीएचडी छात्र)दयानन्द वैदिक अध्ययन पीठ, पंजाब विश्वविद्यालय, चण्डीगढ़)

विश्व के पुस्तकालय में उपलब्ध प्राचीनतम ग्रन्थ वेद हैं। प्राचीन भारतीय ऋषियों का मन्तव्य है कि सृष्टि के आदि में परमपिता-परमात्मा ने ऋषियों के माध्यम से यह ज्ञान मनुष्यों को प्रदान किया। ये वेद परमपिता के निःश्वास के समान हैं। इन ऋचाओं का मुख्य विषय स्तुति है और इस स्तुति के माध्यम से ऋषि परमात्मा के गुणों को अपने अन्दर धारण करने का प्रयास करते हैं। मंगलेच्छुक मनुष्य परम पवित्र इन ऋचाओं का अध्ययन करता है और स्वयं परमात्मा से ऋचाओं में स्थापित रस का आनन्द लेता है।

कालान्तर में जब वेदों का साक्षात् दर्शन कठिन हो गया, तो अन्य ग्रन्थ लिखे गये। ब्रह्मा का (वेद) व्याख्यान ही ब्राह्मण कहलाता है। इन ब्राह्मणों में वेदों के भावों को यागों में विनियोग के साथ-साथ मन्त्रों की व्याख्या को रोचक बनाने के लिए नाटक का रूप दिया गया और इन नाटकों को जन-जन तक पहुँचाने के लिए आख्यान के रूप में व्याख्यायें की गई।

सरमा तथा पणि संवाद

सरमा शब्द निर्वचन प्रसंग में उद्धृत ऋग्वेद १०.१०८.१ के व्याख्यान में प्राप्त होता है। आचार्य यास्क का कथन है कि इन्द्र द्वारा प्रहित देवशुनी सरमा ने पणियों से संवाद किया। पणियों ने देवों की गाय चुरा ली थीं। इन्द्र ने सरमा को गवान्वेषण के लिए भेजा था। यह एक प्रसिद्ध आख्यान है।

आचार्य यास्क द्वारा सरमा माध्यमिक देवताओं में पठित है। वे उसे शीघ्रगामिनी होने से सरमा मानते हैं। वस्तुतः मैत्रायणी संहिता के अनुसार भी सरमा वाक् ही है गाय रश्मियाँ हैं। इस प्रकार यह आख्यान सूर्य रश्मियों के अन्वेषण का आलंकारिक वर्णन है। निरुक्त शास्त्र के अनुसार "ऋषैः दृष्टार्थस्य प्रीतिर्भवत्याख्यानसंयुक्ता" अर्थात् सब जगत् के प्रेरक परमात्मा अदृष्ट अर्थों को आख्यान के माध्यम से उपदिष्ट करते हैं। वेदार्थ परम्परा के अनुसार मन्त्रों के तीन प्रकार के अर्थ होते हैं। आधिभौतिक, आदिदैविक, आध्यात्मिक, तीनों दृष्टियों से इस सूक्त के पर्यालोचन से सिद्ध होता है कि यह सूक्त किन्हीं विशेष अर्थों को कहता है। विश्लेषण के लिए इस सम्वाद में प्रयुक्त शब्दों के अर्थों को व्याकरण और निरुक्त के अनुसार समझने की आवश्यकता है।

क्रमशः एक-एक शब्द पर विचार करते हैं।

पणयः ऋग्वेद में १६ बार प्रयुक्त बहुबचनान्त पणयः शब्द तथा चार बार एकबचनान्त पणि शब्द का प्रयोग है। पणि शब्द पण् व्यवहारे स्तुतौ च धातु से अच् प्रत्यय करके पुनः मत्वर्थ में "अत इनिठनौ" से इति प्रत्यय करके सिद्ध होता है। यः पणते व्यवहरति स्तौति स पणिः अथवा कर्मवाच्य में पण्यते व्यवह्रियते सः पणिः"। अर्थात् जिसके साथ हमारा व्यवहार होता है और जिसके बिना हमारा जीवन-व्यवहार नहीं चल सकता है, उसे पणि कहते हैं। इस प्रकार यह पणि शब्द मेघ का वाचक है। अथवा वायु का वाचक है। इस पणि को वृत्र अथवा 'असुर' कहा गया है आचार्य यास्क ने वृत्रं वृणोतेः कहकर जो आवरण करता है/ढक लेता है, उसे वृत्र कहते हैं। वही वृत्र वरण कर लेने वाला मेघ जब वारिदान करता है तब देव कहलाता है। किन्तु जब जल को सुरक्षित कर लेता है बरसने नहीं देता, तब वह असुर कहलाता है। इसकी व्याख्या इस प्रकार कर सकते हैं- राति ददाति इति रः सु शोभनं राति ददाति इति सुरः न सुरः असुरः अर्थात् इस यौगिक अर्थ के अनुसार असुर शब्द पणि के प्रसंग में अवरोध मेघ है। (२) इन्द्र,

निरुक्तकार यास्क के अनुसार इन्दति परमैश्वर्यवान् भवति इति इन्द्रः, इराम जलानां अनिता इन्द्रः- सूर्य। इसी तरह आधिदैविक अर्थ में इन्द्र सूर्य का वाचक है, आध्यात्मिक अर्थ में इन्द्र जीवात्मा और परमात्मा को कहते हैं। इन्द्र सूर्य की गावः- रश्मयः गावः इति रश्मि नामसु पठितम् (निरुक्त) अब इस कथा का भाव हुआ कि इन्द्र- सूर्य की गावः, रश्मियों को जल न देने वाले असुरों- मेघों ने आच्छन्न कर लिया है। इन्द्र के बार-बार सूचना देने पर भी पणियों ने इन्द्र की गायों को नहीं छोड़ा और जिससे प्रजा व्याकुल होने लगी, तब इन्द्र ने दूती भेजी। दूती को यहाँ पर देवशुनी सरमा कहा गया है। सरति गच्छति सर्वत्र इति सरमा, देवानां सुनी सूचिका दूती वा देवसूनी, जो तेजी से गति करती है और देवों की दिव्यता की सूचना देती है। वह विद्युत ही वहाँ देवसुनी सरमा कही गई है। इस प्रकार देवशुनी बादल की गडगड़ाहट रूपी ध्वनि के साथ पणियों से संवाद करती है और कहती है कि हमारे राजा की गौओं को छोड़ दो, नहीं तो हमारा बलवान राजा दण्ड देगा। पणियों ने देवशुनी की बात नहीं मानी, तब इन्द्र ने वज्र प्रहार कर अर्थात् वायु के प्रहार के माध्यम से पणियों को मारकर धरती पर सुला दिया और अपनी गायों को मुक्त करा लिया। सारा संसार वृष्टि से सुखी हुआ और सूर्य की किरणें चारों ओर फैल गईं। वैदिक आख्यानों को सामान्य अर्थों में ग्रहण न करके विशिष्ट एवं यौगिक अर्थों में ही ग्रहण करना चाहिए। शब्दों के यौगिक अर्थो के आलोक में इन आख्यानों को देखने पर वेदार्थ की उत्तम आदर्श नव्य और दिव्य प्रक्रिया का ज्ञान होता है।

अन्त में प्रश्न आता है कि वैदिक आख्यानों की वास्तविकता स्वीकरणीय है अथवा अस्वीकरणीय? तो इसका संक्षप में उत्तर यह है कि यदि रुपकालंकार की दृष्टि से वे आख्यान मन्त्रार्थ से संगत होते हैं, तो वे आलंकारिक रूप से अथवा शाश्वत घटित होने वाली घटनाओं के ऐतिहासिक शैली के चित्रण के रूप में ग्राह्य एवं स्वीकरणीय हैं, परन्तु यदि मन्त्र सूक्त गत संवादादि का समबन्ध किसी अवरकालिक पुराण महाभारतादि ग्रन्थों में वर्णित अनित्य इतिहास से बलात् जोड़ा गया है और वह गठजोड़ असंगत और अटपटा लग रहा है, तो उसे वास्तविक रूप में स्वीकार न करके सर्वथा अवास्तविक ही मानना चाहिए। तत्र नामान्याख्यातजानीति शाकटायनो नैरुक्तसमयश्च, तथा नाम च धातुजमाह निरुक्ते व्याकरणे शकटस्य च तोकम् के धातुज्ञ वैयाकरणों में विशेष शाकटायनाचार्य तथा सम्पूर्ण नैरुक्त समुदाय वेद के शब्दों को धातुज अर्थात् यौगिक मानते हैं। इस दृष्टि से वेदमन्त्रों से कोई रूढ़ि अर्थ या मानवीय अनित्य इतिहास के वर्णन की सम्भावना वहाँ नहीं हो सकती है। अतः सारमेयाश्वानी, यम-यमी, अश्विनी, देवापि, सरमा, पणि विश्वामित्र, ग्रत्समद इन्द्र आदि पदों से किसी लौकिक कथानक की कल्पना वेदों में करना अन्धानुकरण है। अतः ऐसे शब्दों और उनसे अभिव्यक्त होने वाले कथोपकथन से किसी अन्य प्राकृतिक व वैज्ञानिक तथ्य का अनुसन्धान करना ही युक्तिसंगत होगा। यदि कोई आख्यान मन्त्रार्थ को स्पष्ट करने के लिए कल्पित किये गये हैं, तो उनको आलंकारिक दृष्टि से संगत मानना चाहिए। मन्त्रों में उपमा, रूपक, श्लेषादि अलंकारों का प्रयोग प्राचीन और अर्वाचीन प्रायः सभी भाष्यकारों ने स्वीकार किया। वैदिक आख्यानों में प्राकृतिकता, अलौकिकता आदि का वर्णन मिलता है। उर्वशी आख्यान में मेघों का और विद्युत का, सरमा, पणि आख्यान में विद्युत् और अवर्षणशील मेघों का, इन्द्र वृत्र आख्यान में विद्युत् और मेघ के युद्ध का वर्णन है। वैदिक ग्रन्थों ने इनका प्राकृतिक अर्थ किया है।

उपरिगत विवेचन से यह सर्वथा स्पष्ट हो जाता है कि मन्त्रगत इतिहास अथवा आख्यान तत्वतः औपचारिक, अर्थवादात्मक उपमार्थक अथवा आलंकारिक हैं, आधुनिक अर्थ में ऐतिहासिक नहीं। अतः उनके सम्यक् अवगम एवं विश्लेषण में अतीव सावधानी तथा चिन्तन की अपेक्षा है।

❑❑

योग रहस्य

(ले. स्वामी वेदानन्द सरस्वती, उत्तरकाशी)

यस्मिन्त्सर्वाणि भूतानि आत्मैवाभिभूत् विजानतः।
तत्र को मोहः कः शोकः एकत्वमनुपश्यतः।।
यजु. ४०.७।।

शब्दार्थ :- (यस्मिन्) जिस (विजानतः) ज्ञानी के ज्ञान में (सर्वाणि भूतानि) सभी प्राणी (आत्मा) परमात्मा (एव) ही (अभिभूत) हो गए, ऐसे (एकत्वमनुपश्यतः) एकत्वदर्शी व्यक्ति को (तत्र) वहाँ (को मोहः) किस का मोह और (कः शोकः) किस का शोक रहेगा अर्थात् वहाँ न मोह रहता न ही शोक रहता।

यह असम्प्रज्ञात् समाधि अवस्था का चित्रण खींचा गया है, जहाँ योगयुक्त आत्मा को सर्वत्र एक ब्रह्म ही नज़र आता है। असम्प्रज्ञात् समाधि में आत्मा रूप को भी विस्मृत कर सर्वत्र एक विभु आत्मा का ही दर्शन करता है। इस अवस्था को पाने के लिये जिज्ञासुजनों के लिये हम एक क्रम का दिग्दर्शन कराते हैं।

१. योग परिभाषा : 'योगश्चित्तवृत्ति निरोधः। योगः समाधि।' अर्थात् चित्तवृत्तियों का निरोध कहें या समाधि कहें, वह योग ही है।

२. समाधि प्राप्ति का फल-

(क) इससे साधक का मन पूर्णतया निर्मल और स्थितिप्रज्ञता प्राप्त होती है।

(ख) सब कषायों का क्षय हो जाता है।

(ग) व्यक्तित्व का पूर्ण विकास होता है।

(घ) व्यक्ति को अपार आनंद की अनुभूति होती है।

(ड.) मन और इन्द्रियों पर पूर्ण संयम हो जाता है।

(च) सुन्दर स्वास्थ्य और कुशाग्र बुद्धि प्राप्त होती है।

(छ) प्रसुप्त शक्तियाँ जागृत होती हैं।

(ज) आत्म साक्षात्कार और प्रभुदर्शन होता है।

(झ) मृत्यु विजय की उपलब्धि होती है।

समाधि प्राप्ति के लिए प्रक्रिया :-

१. वर्ममान में जीना सीखें। अतीत की स्मृतियों में और भविष्य की कल्पनाओं में समय न खोवें।

२. जो भी कर्म करें, पूरे मनोयोग से करें। सब काम धर्मानुसार ही करें।

३. सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने के लिये सदैव तैयार रहें। प्रमादी न बनें।

४. शुद्ध सात्विक आहार और मितभाषण करें।

५. सज्जनों से मैत्री और दुर्जनों से उपेक्षा भाव रखें।

६. यम-नियमों का नियमित पालन करें। उससे मन स्वच्छ और स्वस्थ होगा।

७. योगासनों का नित्य अभ्यास करें। इससे शरीर स्वस्थ निरोग बनेगा। ध्यान के समय किसी स्थिर आसन पर बैठें, जिस आसन पर दो घंटे तक स्थिरतापूर्वक बैठ सकें।

८. **प्राणायाम-** स्थिर आसन पर बैठ कर प्राणायाम का अभ्यास करें। लम्बे और गहरे श्वास-प्रश्वास का अभ्यास करें। प्राणायाम से मन को एकाग्रता मिलती है। शरीर को आरोग्यता प्राप्त होती है।

९. **प्रणव ध्वनि-** लम्बा गहरा श्वास अन्दर लेकर ऊँचे स्वर से ओङ्कार का नाद करें। इस क्रिया को ९ से ११ बार दोहराएँ।

प्रणव ध्वनि के लाभ - १. आस्तिक भावना की दृढ़ता होती है। २. इष्ट की स्मृति होती है। ३. तनावों से मुक्ति मिलती है। ४. रोगों का शमन होता है। ५. आनंद की अनुभूति होती है। ६. मन की एकाग्रता बढ़ती है। ७. बुद्धि की शुद्धि होती है। ८. प्राणशक्ति प्राप्त होती है। ९. स्मरणशक्ति की वृद्धि होती है।

१०. नाद से उत्पन्न प्रकम्पनों से भीतरी अवयवों की मालिश होकर वे स्वास्थ्य लाभ करते हैं। ११. सूक्ष्म उत्तकों तक भी रक्त का संचार सहज गति से होने लगता है।

<u>प्रणव ध्वनि करते समय अपने अन्दर-बाहर शुक्ल वर्ण के परिचक्र की भावना करें।</u>

१०. मन की एकाग्रता को पाने के उपाय -

१. मन की स्थिरता या एकाग्रता के लिये शरीर की स्थिरता अनिवार्य है। शरीर से जैसे वस्त्र को निकाल अलग कर देते हैं, वैसे ही मन से शरीर को पृथक देखें। शरीर के थकानरहित, शांत, स्वस्थ होने की भावना करें।

२. फिर शरीर के नाड़ीतंत्र पर ध्यान लगायें। सुषुम्ना के निचले छोर से लेकर ऊर्ध्वगमन करते हुए सहस्रसार चक्र तक ध्यान करें। इससे शरीर की प्राण ऊर्जा ऊर्ध्वगमन करने लगती है, जिसे कुछ लोग कुण्डलिनी जागरण का नाम देते हैं।

३. प्राणायाम मन की एकाग्रता का एक प्रधान साधन है। विधिवत रूप से नियमित प्राणायाम की अभ्यास करें। इस विषय पर विस्तार से जानने के लिये हमारी **<u>'संध्या से समाधि'</u>** पुस्तक पढ़ें।

४. शरीर की कोशिकाओं में होने वाले सूक्ष्म प्रकम्पनों की भी अनुभूति करें। पैर से लेकर सिर तक ध्यानपूर्वक देखेंगे, तो यह प्रत्यक्ष अनुभव होने लगता है। फिर ब्रह्मरन्ध्र में ध्यान लगाने पर सारे शरीर का स्पंदन एक साथ देखा जा सकता है। इस प्रकार के अभ्यास से शरीर की रोग-प्रतिरोधक शक्ति बढ़ती है।

५. इससे अगले क्रम में शरीर के अन्दर अन्तःस्रावी और बहिस्रावी ग्रंथियों का भी अवलोकन करें। इन ग्रंथियों में रसायनों का निर्माण होता है। नाड़ीतंत्र में उन रसायनों का प्रभाव देखा जाता है। इन रसायनों के बदलने से व्यक्ति का स्वभाव भी बदल जाता है। हृदयदेश में तथा आज्ञाचक्र में ध्यान केन्द्रित करने से रसायनों के स्राव बदल जाते हैं।

६. **<u>रंगों का ध्यान-</u>** मानसिक विचारों के भी अपने रंग होते हैं। जैसे- सूरज की रश्मियों के सात रंग इन्द्रधनुष में देखे जाते हैं, वैसे ही मानसिक भावों के कृष्ण, नील, जामुनी, लाल, गुलाबी, शुक्ल, हरा रंग आदि भेद होते हैं। शुभ भावों के रंग पृथक होते हैं। अशुभ भावों के रंग पृथक होते हैं। अपने-अपने रंगों के साथ मन के भाव व्यक्ति के समग्र व्यक्तित्व को प्रभावित करते हैं। उज्ज्वल व्यक्तित्व के निर्माण के अभिलाषी व्यक्ति को शुभ विचारों के शुक्ल रंग का ध्यान करना चाहिए। ओङ्कार के जाप के साथ भी शुक्ल रंग का ध्यान करें।

७. **क्लेशों से मुक्ति -** मानसिक भावों के साथ जब राग-द्वेष पैदा हो जाते हैं, तो वे ही क्लेशों को जन्म देते हैं। राग-द्वेष पैदा ही न हों, इसके लिये आत्मा-परमात्मा का ध्यान करें। चेतन की भावना, से राग-द्वेष पेदा नहीं होते।

८. **श्रद्धा -** व्यक्ति को अपनी श्रद्धा के अनुसार ही फल मिलता है। ईश्वर की भक्ति श्रद्धापूर्वक ही करें। वेद-शास्त्रों, ऋषि-मुनियों और गुरुजनों के प्रति की गयी श्रद्धा व्यक्ति को उसके लक्ष्य तक पहुँचा देती है।

९. **आत्म-संयम-** आत्मा में परमेश्वर ने अद्‌भुत शक्तियाँ रखी हैं, किन्तु जनसामान्य उनसे अनभिज्ञ बना रहता है। शक्तियों का जागरण योगाङ्गों के अनुष्ठान से हो जाता है। शक्ति प्राप्त करके भी साधक व्यक्ति मन की धाराओं में नहीं बहता। आत्म-संयम के द्वारा शक्तियों का सदुपयोग ही करता है। शक्तियों का सदुपयोग लक्ष्य-प्राप्ति के लिये ही होना चाहिए।

१०. **आत्म-दर्शन-** आत्मा ही दृष्टा, श्रोता, वक्ता, मन्ता और सभी भावों का साक्षी होता है। जब आत्मा स्वयं को भावों से अलग देखने लगता है, तो वह उस अभ्यास से अपने आत्म स्वरूप में अवस्थित हो जाता है। **'दृष्टा शुद्धोऽपि प्रत्ययानुपश्यः।'** आत्मा अपने स्वरूप में शुद्ध होते हुए भी बुद्धि के ज्ञान का साक्षी मात्र होता है।

११. **असम्प्रज्ञात् समाधि-** योगाङ्गों के अनुष्ठान से जब बुद्धि में सत्वगुण की प्रबलता हो जाती है, तो वह राग-द्वेष से ऊपर उठ कर आनंद की अनुभूति करने लगती है। उसमें स्थैर्य उत्पन्न होकर आत्मा की

कैवल्य-प्राप्ति में वह सहायक बनती है। सम्प्रज्ञात समाधि की अवस्था में आत्मा अपने को मन, बुद्धि, आदि से पृथक देखने लगता है किन्तु असम्प्रज्ञात् समाधि में अपने स्वरूप को पृथक नहीं देखता, उसे सर्वत्र एक विभु परमपिता- परमेश्वर के ही दर्शन होते हैं। उस अवस्था में दृष्टा और दृश्य का भेद भी समाप्त हो जाता है। इसी अवस्था का उल्लेख यजु. ४०.७ मंत्र कर रहा है। उस अवस्था में द्वैत कुछ देखने या सुनने के लिये शेष नहीं रह जाता। जिस स्थिति में एकमात्र ब्रह्म ही ब्रह्म रह जाये, वहाँ भय, शोक, मोह कैसा?

१२. **मुक्तावस्था-** जब मन में कोई कामना शेष नहीं रहती। सभी राग-द्वेष, मोह आदि क्लेश समाप्त हो जाते हैं। अन्तःकरण में ज्ञान का प्रकाश हो जाता है। सभी विषयों से पूर्णतया वैराग्य हो जाता है, उस अवस्था में योगीपुरुष जीवनमुक्त होकर जीने लगता है। प्रारब्ध अभी शेष है, उसके अनुसार जीवन की गाड़ी चल रही होती है, किन्तु अपने जीवन से दूसरों को कोई कष्ट न हो तथा दूसरे भी अपनी साधना में बाधक न बन सकें इसलिये योगी पुरुष घर परिवार से दूर एकांत स्थान में जाकर रहने लगता है। प्रारब्ध समाप्ति पर वह आत्मा मुक्त अवस्था को प्राप्त होकर मुक्ति का आनंद लेती है। यही योगमार्ग की अंतिम मंज़िल है।

❑❑

पृष्ठ १० का शेष

यह जान लेने के बाद कोई सन्देह नहीं रहता कि पृथ्वीरूपी गाय का दोहन वही कर सकता है, जो उसके अग्निहोत्ररूपी बछड़े की सेवा करता है, अर्थात् नित्य यज्ञ करता है।

कितने आश्चर्य की बात है कि हम वेद को ईश्वरीय ज्ञान मान कर भी वेद की शिक्षाओं व वैदिक मर्यादा का पालन करने के प्रति सचेत व सजग नहीं दिखते। महर्षि दयानन्द सरस्वती के अनुयायी होने के नाते उनके आदेश- "वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम् धर्म है" का पालन करना हमारा नैतिक दायित्व है। कितने आर्य हैं, जो नित्यप्रति या महीने में १०-१५ दिन भी वेद का स्वाध्याय करते-कराते हैं? जब वेद पढ़ेंगे ही नहीं, तो वेद की शिक्षाओं, व वैदिक मर्यादाओं के प्रति विश्वास व श्रद्धा कैसे उत्पन्न होगी? आर्यो! वेद पढ़ो। वेद की बातें मिथ्या नहीं हैं। हमारे वेदवेत्ता ऋषि-महर्षियों ने वेद के अनुसार जीवन जीकर और संसार की सर्वोत्तम उपलब्धियों को पाकर वेद की व्यावहारिक सत्यता को सिद्ध कर दिया है। हमें नहीं भूलना चाहिए कि वेदानुकूल जीवन जब तक हमारा था, तब तक हम विश्वगुरु थे, चक्रवर्ती सम्राट थे और समृद्धि में सोने की चिड़िया थे! महाभारत के गृहक्लेश ने विश्वयुद्ध का रूप धारण करके हमारे सामने वेद-विमुख होने का भयंकर दुष्परिणाम दिया। वेद से भटककर यज्ञों में पशुहिंसा करके हमने लम्बे काल तक जो पाप किया, वह सैकड़ों वर्षों की क्रूर पराधीनता बनकर हमारे सामने आया। प्रभुकृपा से इस भारतभूमि के सुदिन लौटने का सुख सुयोग महर्षि दयानन्द जैसे महामानव के रूप में बना। उस देवपुरुष ने भारत को पुनः ऋषियों के युग में ले जाने का स्वप्न देखा और उस स्वप्न को साकार करने के लिए अपना सारा जीवन लगा दिया। अपने इस महान् स्वप्न को आगे बढ़ाने के लिए वह हम आर्यों की आँखों में डाल गया। यदि हम आँखें खोलकर देखें, तो हम पायेंगे कि वह स्वप्न हमें पुकार रहा है! हमें उसकी पुकार सुनकर ऋषि के उस पावन स्वप्न को पूरा करने में अपना जीवन लगाना होगा। यज्ञ एक ऐसा माध्यम है, जो ऋषि के स्वप्न को पूरा करने की हमें आन्तरिक शक्ति देगा और उसके अनुकूल वातावरण भी तैयार करेगा। यज्ञशील आर्य जहाँ ऋषि का सच्चा अनुयायी बनकर माँ मानवता की सच्ची सेवा कर सकता है, वहीं वह पारिवारिक सुख-समृद्धि व व्यक्तिगत श्रेष्ठ जीवन प्राप्त कर सकता है। आर्यो! यज्ञशील बनो। आर्यो! पृथ्वीरूपी गौ के अग्निहोत्र रूपी बछड़े का पालन करो!!

❑❑

अलगाववादी सिखों को गुरु ग्रन्थ साहिब की सीख
(डॉ. विवेक आर्य)

खालिस्तानी बनने के चक्कर में कुछ सिख भाई मस्जिद जाकर नमाज अदा करने से लेकर "हम हिन्दू नहीं हैं।" "सिख गौ को माता नहीं समझते।" "सिख मुसलमानों के अधिक निकट हैं क्यूंकि दोनों एक ईश्वर को मानते हैं।" जैसी बयानबाजी कर हिन्दुओं और सिखों के मध्य दरार डालने का कार्य कर रहे हैं।

हमें यह कहते हुए खेद हो रहा है कि अंग्रेजों की 'फूट डालो और राज करो' की नीति का स्वार्थ एवं महत्वाकांक्षाओं के चलते पहले के समान अनुसरण हो रहा है। हम यह क्यों भूल जाते हैं कि एक काल में पंजाब में हर परिवार के ज्येष्ठ पुत्र को अमृत चखा कर सिख अर्थात् गुरुओं का शिष्य बनाया जाता था, जिससे कि यह देश, धर्म और जाति की रक्षा का संकल्प ले। यह धर्मपरिवर्तन नहीं, अपितु कर्त्तव्यपालन का व्रत ग्रहण करना था। खेद है कि हम जानते हुए भी न केवल अपने इतिहास के प्रति अनजान बन जाते हैं, अपितु अपने गुरुओं की सीख को भी भूल जाते हैं।

गुरु साहिबान बड़े श्रद्धा भाव से सिखों को हिन्दू धर्म की रक्षा का सन्देश देते हैं। गुरु नानक जी से लेकर गुरु गोविन्द सिंह जी सब हिन्दू धर्म को मानने वाले थे एवं उसी की रक्षा हेतु उन्होंने अपने प्राणों की आहुति तक दे दी। उदाहरण के लिए देखिये पंथ प्रकाश संस्करण ५ में पृष्ठ २५ में गुरुनानक देव जी के विषय में लिखा है-

पालन हेत सनातन नेतै, वैदिक धर्म रखन के हेतै।
आप प्रभु गुरु नानक रूप, प्रगट भये जग में सुख भूपम्।।

अर्थात् सनातन वैदिक धर्म की रक्षा के लिए भगवान गुरु नानक जी के रूप में प्रकट हुए।

गुरु तेगबहादुर जी के वचन बलिदान देते समय पंथ प्रकाश में लिखे हैं-

हो हिन्दू धर्म के काज आज मम देह लटेगी।

अर्थात् हिन्दू धर्म के लिए आज मेरा शरीर होगा।

औरंगज़ेब ने जब गुरु तेगबहादुर से पूछा कि आप किस धर्म के लिए अपने प्राणों की बलि देने के लिए तैयार हो रहे हैं, तो उन्होंने यह उत्तर दिया कि-

आज्ञा जो करतार की, वेद चार उचार,
धर्म तास को खास लख, हम तिह करत प्रचार।
वेद विरुद्ध अधर्म जो, हम नहीं करत पसंद,
वेदोक्त गुरुधर्म सो, तीन लोक में चंद।।

(सन्दर्भ- श्री गुरुधर्म धुजा पृष्ठ ४८, अंक ३ कवि सुचेत सिंह रचित)

अर्थात् ईश्वर की आज्ञारूप में जो चार वेद हैं, उनमें जिस धर्म का प्रतिपादन है, उसका ही हम प्रचार करते हैं। वेदविरुद्ध अधर्म होता है, उसे हम पसंद नहीं करते। वेदोक्त गुरुधर्म ही तीनों लोकों में चन्द्र के समान आनंददायक है।

गुरु गोविन्द सिंह के दोनों पुत्रों जोरावर सिंह और फतेह सिंह जी से जब मुसलमान होने को कहा गया, तो उन्होंने जो उत्तर दिया, उसके अंतिम शब्द पंथ प्रकाश में इस प्रकार से दिए गए हैं-

गिरी से गिरावो काली नाग से डसावो

हा हा प्रीत नां छुड़ावौं इक हिन्दू धर्म पालसों

अर्थात् तुम हमें पहाड़ से गिराओ, चाहे साँप से कटवाओ पर एक हिन्दूधर्म से प्रेम न छुड़वाओ

वेदों की महिमा बताते हुए कहा गया है-

वाणी ब्रह्मा वेद धर्म दृढ़हु पाप तजाया।

अर्थात् वेद ईश्वर की वाणी हैं, उसके धर्म पर दृढ़ रहो ऐसा गुरुओं ने कहा है और पाप छुड़ाया है (सन्दर्भ- आदि ग्रन्थ साहिब राग सुहई मुहल्ला ४ बावा छंद २ तुक २)

दिया बले अँधेरा जाये,

वेद पाठ मति पापा खाये।

वेदपाठ संसार की कार,

पढ़-पढ़ पंडित करहि बिचार।

बिन बूझे सभ होहि खुआर,

नानक गुरुमुख उतरसि पार।

अर्थात् जैसे दीपक जलाने से अँधेरा दूर हो जाता है, ऐसे ही वेद का पाठ करके मनन करने से पाप खाये जाते हैं। वेदों का पाठ संसार का एक मुख्य कर्त्तव्य है। जो पंडित लोग उनका विचार करते हैं, वे संसार से पार हो जाते हैं। वेदों को बिना जाने मनुष्य नष्ट हो जाते हैं। (सन्दर्भ- आदि ग्रन्थ साहिब राग सुहई मुहल्ला १ शब्द १७)

गुरुनानक देव जी की यह प्रसिद्ध उक्ति -

''वेद कतेब कहो मत झूठे, झूठा जो ना विचारे अर्थात् वेदों को जूठा मत कहो झूठा वो है, जो वेदों पर विचार नहीं करता''। सिखपंथ को हिन्दू सिद्ध करती है।

जहाँ तक इस्लाम का सम्बन्ध है, गुरुग्रन्थ साहिब इस्लाम की मान्यताओं से न केवल भारी भेद रखता है, अपितु उसका स्पष्ट रूप से खंडन भी करता है।

१. सुन्नत का खंडन

काजी तै कवन कतेब बखानी।

पदत गुनत ऐसे सभ मारे किनहूं खबरि न जानी।।१।। रहाउ।।

सकति सनेहु करि सुंनति करीऐ मैं न बदउगा भाई।।

जउ रे खुदाइ मोहि तुरकु करैगा आपन ही कटि जाई।।२।।

सुंनति कीए तुरकु जे होइगा अउरत का किआ करीऐ।।

अरध सरीरी नारि न छोडै ता ते हिंदू ही रहीऐ।।३।।

छाडि कतेब रामु भजु बउरे जुलम करत है भारी।।

कबीरै पकरी टेक राम की तुरक रहे पचिहारी।।४।।८।।

सन्दर्भ- राग आसा कबीर पृष्ठ ४७७

अर्थात् कबीर जी कहते हैं- ओ काजी तू कौन सी किताब का बखान करता है। पढ़ते हुए, विचारते हुऐ सब को ऐसे मार दिया, जिनको पता ही नहीं चला। जो धर्म के प्रेम में सख्ती के साथ मेरी सुन्नत करेगा सो मैं नहीं कराऊँगा। यदि खुदा सुन्नत करने ही से ही मुसलमान करेगा, तो अपने आप लिंग नहीं कट जायेगा। यदि सुन्नत करने से ही मुसलमान होगा, तो औरत का क्या करोगे? अर्थात् कुछ नहीं और अर्धांगिनी नारी को छोड़ते नहीं इसलिए हिन्दू ही रहना अच्छा है। ओ काजी! कुरान को छोड़! राम भज १ तू बड़ा भारी अत्याचार कर रहा है, मैंने तो राम की टेक पकड़ ली है, मुसलमान सभी हार कर पछता रहे हैं।

२. रोजा, नमाज़, कलमा, काबा का खंडन

रोजा धरै निवाज गुजारै कलमा भिसति न होई।।

सतरि काबा घट ही भीतरि जे करि जानै कोई।।२।।

सन्दर्भ- राग आसा कबीर पृष्ठ ४८०

अर्थात् मुसलमान रोजा रखते हैं और नमाज़ गुजारते हैं। कलमा पढ़ते हैं। और कबीर जी कहते हैं इन किसी से बहिश्त न होगी। इस घट (शरीर) के अंदर ही ७० काबा के अगर कोई विचार कर देखे तो।

कबीर हज काबे हउ जाइ था आगै मिलिआ खुदाइ।।

सांई मुझ सिउ लरि परिआ तुझै किन्हि फुरमाई गाइ।।१६७।।

सन्दर्भ- राग आसा कबीर पृष्ठ १३७५

अर्थात् कबीर जी कहते हैं- मैं हज करने काबे जा रहा था आगे खुदा मिल गया, वह खुदा मुझसे लड़ पड़ा और बोला ओ कबीर! तुझे किसने बहका दिया।

३. बांग का खंडन

कबीर मुलां मुनारे किआ चढहि सांई न बहरा होइ।।

जा कारनि तूं बांग देहि दिल ही भीतरि जोइ।।१८४।।

सन्दर्भ- राग आसा कबीर पृष्ठ १३७४

अर्थात् कबीर जी कहते हैं कि ओ मुल्ला! खुदा बहरा नहीं जो ऊपर चढ़ कर बांग दे रहा है। जिस कारण तू बांग दे रहा है उसको दिल ही में तलाश कर।

४. हिंसा (कुरबानी) का खंडन

जउ सभ महि एकु खुदाइकहत हउ तउ किउ मुरगी मारै।। १।।
मुलां कहहु निआउ खुदाई।। तेरे मन का भरमु न जाई।।१रहाउ।।
पकरि जीउ आनिआ देह बिनासी माटी कउ बिसमिलि कीआ।।
जोति सरूप अनाहत लागी कहु हलालु किआ कीआ।। २।।
किआ उजु पाकु कीआ मुहु धोइआ किआ मसीति सिरु लाइआ।।
जउ दिल महि कपटु निवाज गुजारहु किआ हज काबै जाइआ।।३।।

सन्दर्भ विलास प्रभाती कबीर पृष्ठ १३५०

अर्थात् कबीर जी कहते हैं- ओ मुसलमानो! जब तुम सब में एक ही खुदा बताते हो, तो तुम मुर्गी को क्यों मारते हो। ओ मुल्ला! खुदा का न्याय विचार कर कह। तेरे मन का भ्रम नहीं गया है। पकड़ करके जीव ले आया, उसकी देह को नाश कर दिया, कहो मिट्टी को ही तो बिस्मिल किया। तेरा ऐसा करने से तेरा पाक उजू क्या, मुँह धोना क्या, मस्जिद में सिजदा करने से क्या, अर्थात् हिंसा करने से तेरे सभी काम बेकार हैं।

कबीर भांग माछुली सुरा पानि जो-जो प्रानी खांहि।।
तीरथ बरत नेम कीए ते सभै रसातलि जांहि।। २३३।।

सन्दर्भ विलास प्रभाती कबीर पृष्ठ १३७७

अर्थात् कबीर जी कहते हैं- जो प्राणी भांग, मछली और शराब पीते हैं, उनके तीर्थ व्रत नेम करने पर भी सभी रसातल को जायेंगे।

रोजा धरै मनावै अलहु सुआदति जीअ संघारै।।
आपा देखि अवर नहीं देखै काहे कउ झख मारै।। १।।
काजी साहिबु एकु तोही महि तेरा सोचि बिचारि न देखै।।
खबरि न करहि दीन के बउरे ता ते जनमु अलेखै।।१।। रहाउ।।

सन्दर्भ रास आगा कबीर पृष्ठ ४८३

अर्थात् ओ काजी साहिब- तू रोजा रखता है, अल्लाह को याद करता है, स्वाद के कारण जीवों को मारता है। अपना देखता है दूसरों को नहीं देखता है। क्यों समय बर्बाद कर रहा है। तेरे ही अंदर तेरा एक खुदा है। सोच-विचार के नहीं देखता है। ओ दिन के पागल खबर नहीं करता है इसलिए तेरा यह जन्म व्यर्थ है।

वेद की मान्यताओं का मंडन एवं इस्लाम की मान्यताओं का खंडन गुरु ग्रन्थ साहिब स्पष्ट रूप से करते हैं। इस पर भी अब हठरूप में कोई सिख भाई अलगाववाद की बात करता है, तो वह न केवल अपने आपको अँधेरे में रख रहा है,अपितु गुरु ग्रन्थ साहिब के सन्देश की अवमानना भी कर रहा है।

❑❑

महर्षि दयानन्द जी ने किया- लगातार नव घंटे संस्कृत में शास्त्रार्थ

(भावेश मेरजा,भरुच-गुजरात)

चिन्तनीय बातें :

१. 'सत्यमेव जयते' अपने आप नहीं होता है, प्रत्युत सत्य को भी पुरुषार्थपूर्वक जिताना पड़ता है।

२. सुयोग्य- सुपात्र व्यक्ति से शास्त्र-चर्चा करने में समय लगाना फलदायक रहता है- इसका उदाहरण है- यह शास्त्रार्थ।

३. अद्वैतवाद- नवीन वेदान्त के अन्धकार को दूर करने के लिए महर्षि ने दो ग्रन्थ लिखे- १. 'अद्वैत मत खण्डन' और २. 'वेदान्ति ध्वान्त निवारण'। प्रथम ग्रन्थ अप्राप्य है। 'वेदान्ति ध्वान्त निवारण' के अन्त में महर्षि ने अद्वैत मत को मानने से होने वाली हानियों का वर्णन किया है।

४. महर्षि ने सत्यार्थप्रकाश के ७-८-९ और ११ इन चार समुल्लासों में नवीन वेदानत का खण्डन किया है। सत्यार्थ प्रकाश में इतना विस्तार से खण्डन तो मूर्तिपूजा का भी नहीं किया गया है। नवीन वेदान्तियों की गणना उन्होंने नास्तिकों की कोटि में की है।

५. अपने आरम्भिक काल में महर्षि दयानन्द भी कुछ काल पर्यन्त अद्वैतवादी रहे थे। परन्तु कालान्तर में पंचदशी की कथा करना बन्द कर दिया। आगे चलकर वैदिक ग्रन्थों के अध्ययन व मनन से उन्होंने ज्ञान-आलोक प्राप्त किया और ईश्वर-जीव-प्रकृति रूपी तीन अनादि मूल सत्ताओं को मान्य कर वैदिक त्रैतवाद के प्रवर्त्तक बने।

६. निम्नलिखित शास्त्रार्थ को पढ़ने से हम इस बात का अनुमान कर सकते हैं कि अविद्यान्धकार को दूर करने के लिए महर्षि ने कितना पुरुषार्थ किया होगा।

शास्त्रार्थ का विवरण :

१८७९ ई० (सम्वत् १९३६ वि०) में आयोजित हरिद्वार का कुम्भ मेला चल रहा है। आर्यसमाज के प्रवर्त्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती ने यहाँ अपना डेरा लगाया है। उनका वेदधर्म का मण्डन और पाखण्ड मत का खण्डन कार्यक्रम सर्वात्मना चल रहा है। एक दिन प्रातःकाल लगभग ६.३० बजे अकस्मात् एक वृद्ध संन्यासी महात्मा महर्षि के डेरे की ओर आते हुए दिखाई देते हैं। उनकी आयु ८० वर्ष से कम नहीं है, परन्तु शरीर स्वस्थ और बलिष्ठ है। उनके चेहरे पर ओज और तेज है। कफ़नी पहनी है और शिर मुंडाया हुआ है। नाम है- आनन्दवन। उनके साथ उन्हीं की आकृति के उनके १०-१२ शिष्य भी हैं। महर्षि ने उन्हें दूर से ही अपने डेरे की तरफ आते हुए देख लिया था। अतः डेरे के द्वार पर जाकर महर्षि ने सस्मित उनका स्वागत किया और भीतर ले जाकर उन्हें सम्मानपूर्वक गद्दी पर बिठलाया। आनन्दवन जी नवीन वेदान्ती हैं, शांकर मतानुयायी हैं, एकमात्र ब्रह्म को ही सत्य मानते हैं। उनकी दृष्टि में जीव और ब्रह्म एक ही है, अभिन्न है और यह जगत् मिथ्या है। दोनों संन्यासी महानुभाव बैठते हुए मुस्कराते हुए शास्त्रार्थ में प्रवृत्त हुए। दोनों संस्कृत में ही वार्तालाप कर रहे हैं। जीव-ब्रह्म की अभिन्नता और 'अहं ब्रह्मास्मि' इत्यादि तथाकथित 'महावाक्यों' के सत्यार्थ को लेकर गम्भीरता पूर्वक वाद चल रहा है। ६.३० बजे आरम्भ

शेष पृष्ठ २३ पर

घर के अन्दर बैठे आतंकियों का क्या होगा?
(शिवदेव आर्य, गुरुकुल पौन्धा, देहरादून)

भारतवर्ष का अपना निराला ही रूप दिखायी देता है। इसकी सबसे बड़ी विशेषता है कि यह एक मतनिरपेक्ष देश है, जिसको लोग धर्मनिरपेक्ष भी कह देते हैं। जहाँ धर्मनिरपेक्षता की आड़ में लोकतान्त्रिक व्यवस्था को बिगाड़ने का हर सम्भव प्रयास किया जाता है।

ऐसा ही कुछ ९ फरवरी २०१६ को हुआ, शायद आपको यह सारा वृत्त ज्ञात होगा कि इस दिन क्या कुछ हुआ- ९ फरवरी को जे.एन.यू. में वामपन्थी और दलित संगठनों से जुड़े छात्रों ने संसद पर हमले के दोषी अफजल गुरु की बरसी मनाई, इसमें कश्मीर के छात्र शामिल थे। इसके लिए कैंपस में एक सांस्कृतिक संध्या का अयोजन भी किया गया था। इस दौरान देशविरोधी नारे भी लगाए गये।

यह सब जानकर प्रत्येक भारतीय को बहुत दुःख हुआ होगा कि ९ फरवरी को ही हनुमनथप्पा जो जे. एन.यू. के समीपस्थ ही सेना के अस्पताल में देश के लिए अपनी आखिरी साँस ले रहे थे। जहाँ समूचा देश एकजुट होकर उनके जीवन के लिए प्रार्थना व हवन कर रहा था, वहीं देश को एक नई दिशा व दशा देने वाला तथाकथित वर्ग ऐसे सिपाही के बलिदान को कुछ नहीं समझ रहा था, अपितु वह तो आतंकी गतिविधियों को बढ़ावा देने वाले को श्रद्धांजलि दे रहा था। संसद पर अफजल गुरु ने जो हमला किया, यदि वह हमला जे.एन.यू. में हुआ होता, तब शायद वहाँ के लोगों की आँखें खुली होतीं। जहाँ संसार भर में इस कृत्य की निन्दा हुई, वहीं संसद हमले के समय संसद में फंसे हुए कुछ तथाकथित सांसद भी इस राष्ट्रद्रोही कृत्य का अनौपचारी समर्थन कर रहे हैं।

हम सभी जानते हैं कि देश में अभिव्यक्ति की आजादी के नाम पर देश की छवि धूमिल करने की पूरी कोशिश की जा रही है। अभी हाल की ही घटना कि भारतीय क्रिकेटर विराट कोहली के समर्थक को लाहौर में अपनी छत पर भारतीय ध्वज फहराने पर २४ घण्टे के अन्दर-ही-अन्दर १० साल की सजा दे दी जाती है।

आजकल हम कश्मीर के विभिन्न भागों में तिरंगा जलाने और पाकिस्तानी तथा आई एस के झण्डे फहराने की घटनाएँ लगभग प्रत्येक दिन सुन व देख रहे हैं, ऐसे में सरकार के शान्त रहने से दिल्ली में इनके इतने हौसले बढ़ गए कि उन्होंने अफजल गुरु की फाँसी के विरोध में कार्यक्रम आयोजित कर दिया और यूनिवर्सिटी को पता तक न चला, ये बेहद लापरवाही को दर्शाता है। यह सचमुच बहुत ही शर्मसार कृत्य है। क्या यह देशद्रोह नहीं है? इससे बढ़कर और आतंकी होने की कसौटी क्या हो सकती है? अफजल गुरु जैसे आतंकवादियों से सहानुभूति रखना देशद्रोह नहीं तो और क्या है? यह कोई छोटी घटना नहीं है, अपितु इसे एक योजनाबद्ध तरीके से कार्यरूप दिया गया है। क्योंकि बाहरी आतंकी शक्ति तो अपने आप ही कमजोर होती जा रही हैं। इसीलिए घर के अन्दर बैठे लोगों को ही आतंकी बनाने की जोर-शोर से तैयारी चल रही है।

इन विरोधी छात्रों का आतंकवादी संगठन खुले-आम समर्थन कर रहे हैं। जे.एन.यू. में राष्ट्रविरोधी नारेबाजी को आतंकी संगठन लश्कर-ए-तैयबा के प्रमुख हाफिज सईद का खुला समर्थन प्राप्त हो रहा है। सईद ने कथित तौर पर ट्वीट कर पाकिस्तानियों से जे.एन.यू. छात्रों के प्रदर्शन का समर्थन करने की अपील की थी।

सरकार को ऐसे कृत्य के लिए कड़ी से कड़ी कार्रवाई करनी चाहिए कि कल को कोई और ऐसा करने की भूल करना तो दूर,मन में भी न सोच सके।

दिल्ली तो क्या देश के किसी भी कोने में देशद्रोहियों के समर्थन में किसी को आवाज ऊँची करने की हिम्मत नहीं होनी चाहिए। मैं शाहरुख खान, आमिर खान और करण जौहर जैसे लोगों से पूछना चाहता हूँ, जिन्होंने असहिष्णुता को लेकर देश की छवि खराब की और उन तथाकथित कलमबेचू साहित्यकारों से, जिन्होंने राष्ट्रीय पुरस्कार व सम्मान लौटाए, वे बताएँ कि एक यूनिवर्सिटी में आतंकवादियों का समर्थन करने के लिए कार्यक्रम आयोजित करना कहाँ तक सही है? अब इन लोगों की आत्मा क्यों नहीं रो रही है? अब सबकी बोलती क्यों बन्द है? अब ये चांडाल चौकड़ी 'गो इण्डिया गो बैक, भारत की बरबादी तक जंग रहेगी जारी, कश्मीर की आजादी तक जंग रहेगी जारी, अफजल हम शर्मिन्दा हैं तेरे कातिल जिन्दा हैं, तुम कितने अफजल मारोगे, हर घर में अफजल निकलेगा, अफजल तेरे खून से इन्कलाब आयेगा' के नारों के विषय में क्या कहेंगे?

यह भारत ही है, जहाँ इतना सब कुछ होने पर भी अभी तक कार्यवाही के नाम पर केवल गिरफ्तारी ही की गयी है। दिल्ली में इतना कुछ हो गया पर अब तक सब कुछ सहन किया जा रहा है। परन्तु यदि अलगाववादी कश्मीरियों या मुसलमानों के मामले पर कोई प्रदर्शन होता, तो हमारे यहाँ इसे असहिष्णुता का नाम दिया जाता। यह भारत ही है, जहाँ सब कुछ चलता है, क्योंकि हम सहिष्णु हैं। हम उन लोगों में से नहीं है, जो भूल जायें कि अफजल गुरु ने भारतीय संसद पर हमला किया और फिर ११ साल तक केस चला, तब जाकर २०१३ में उसे फाँसी की सजा दी गई, इस हमले को विफल करने वाले अपने उन ११ जवानों के बलिदान को कैसे भुला सकते हैं।

समय है कि देशद्रोहियों के खिलाफ तुरन्त एक्शन लिया जाना चाहिए। सवाल यूनिवर्सिटी प्रशासन की चुप्पी का नहीं है, अपितु सरकार कब बड़ा कदम उठायेगी यह है। इस मामले में दिल्ली वालों को एकजुट होकर देशद्रोहियों को सबक सिखाने के लिए नई क्रान्ति लानी होगी। यही समय की माँग है।

लोकतन्त्र में सरकार को, व्यवस्था को, प्रधानमन्त्री को, मन्त्रियों को, राजनीतिक पार्टियों आदि को बुरा-भला कहने की बात तो समझी जा सकती है, उस का समर्थन भी किया जा सकता है, किन्तु अपनी ही जन्मभूमि का अहित करने की सोच रखने वाले कुछ भी हो सकते हैं, किन्तु देशभक्त तो निश्चित ही नहीं हो सकते। जो अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता के नाम पर देशद्रोह का समर्थन करते हैं, उनकी मानसिकता की जाँच कराना हम सबका मौलिक कर्त्तव्य होना चाहिए।

राष्ट्र महान् है तथा राष्ट्र सर्वोपरि है, राष्ट्रद्रोही तत्वों को निर्मूल करना राजा का परम कर्त्तव्य है। यही राजा का राजधर्म है-

देशद्रोही अथवा शत्रुपक्ष से मिले हुए के लिए दण्ड का विधान चाणक्यनीति में इस प्रकार प्राप्त हाता है-

'दुष्याः तेषुधर्मरुचिपां सुदण्डम् प्रयुजीत' (५/४)

अर्थात् देशद्रोह करने वाले का सर्वनाश कर देना चाहिए। यही इन कुकृत्य करने वालों के साथ करना चाहिए।

ऋग्वेद स्पष्ट शब्दों में आदेश देता है-

'अमित्रहा वृत्रहा दस्युहा च विश्वा वसून्या भरा त्वं न' (ऋग्वेद-१८/८३/३)

अर्थात् जो समाज में दस्यु कर्म, सुख-शान्ति में बाधा डालने वाले हैं, उनको नष्ट कर देना चाहिए।

ऐसे विकराल काल में राजा को कठोर निर्णय लेना

चाहिए, जिसके लिए ऋग्वेद के १०वें मण्डल में आदेश दिया गया है-

ये नः.....उग्रं चेत्तारमधिराजमक्रन्। (१०/१२८/६)

देशद्रोही को कठोर से कठोर दण्ड के लिए यजुर्वेद के ३६वें अध्याय में कहा है कि-

उग्रं लोहितेन मित्रं सौव्रत्येन रुद्रं दौर्व्रत्येनेन्द्रं प्रक्रीडेन मरुतो बलेन साध्यान् प्रमुदा।

भवस्य कण्ठय्ँरुद्रस्यान्तः पार्श्व्यं महादेवस्य यकृच्छर्वस्य वनिष्ठुः पशुपतेः पुरीतत्।। (यजुर्वेद-३६/६)

ऐसे दुष्ट पापाचारियों तथा देशद्रोहियों के लिए मनु महाराज का विधान है - 'दण्डः शास्ति प्रजा सर्वा दण्ड एवाभिरक्षति' (मनु-६/७)

अर्थात् दण्ड ही प्रजा को व्यवस्थित रखता है और दण्ड ही सभी की रक्षा करता है। अतः प्रशासन को इन के खिलाफ देशद्रोह का अभियोग चलाना चाहिए और कठोरतम दण्ड देना चाहिए।

यदि प्रशासन इस कार्य को करने में असमर्थ हो, तो प्रत्येक भारतीय को अपनी भारतीयता को दिखाते हुए रतन टाटा के समान देश की प्रत्येक गतिविधियों से इन जेएनयू में पल रहे आतंकवादी कम्यूनिस्टों का बहिष्कार करना चाहिए।

आज प्रत्येक मनुष्य के लिए आवश्यक है कि वह हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई आदि की क्षुद्र मानसिकता से ऊपर उठकर अपने को भारतीय बनाने का यत्न करे। यही इस समस्या का हल है, अन्यथा आज ऐसी एक घटना हुई है, कल को अन्यत्र भी यही दृश्य दिखायी दें, तो कोई आश्चर्य की बात नहीं होगी।

अब हम क्या चाहते हैं, सोचने की बात है?

❑❑

पृष्ठ २० का शेष

हुआ है यह वार्तालाप, परन्तु अब तो ११ बज गया है। भोजन के लिए योगी सन्तनाथ सूचना देने आए। महर्षि ने आनन्दन जी और उनके शिष्यों को भोजन ग्रहण करने की विनती की। परन्तु आनन्दवन जी ने कहा कि जब तक इन प्रश्नों का निर्णय न हो जाएगा, तब तक मैं भोजन नहीं करूँगा। भोजन किए बिना ही शास्त्रालाप पुनः अविरत चलने लगा। महर्षि ने चारों वेद एवं अन्य ६०-६५ ग्रन्थ अपनी सन्दूकों से निकलवाए और उनमें से अनेक-प्रमाण-वाक्य आनन्दवन जी को दिखलाने लगे। दो बजे तक यही क्रम चलता रहा। दो बजे के पश्चात् दोनों उठ खड़े हुए और परस्पर कुछ बातें करने लगे। महर्षि के वेदशास्त्र अनुमोदित एवं युक्तिपूर्ण पक्ष को सुनकर अब आनन्दवन जी को समाधान प्राप्त हो गया था। उन्होंने खड़े होकर अपने प्रिय शिष्यों को सम्बोधित करते हुए कहा- मैंने दयानन्द जी के मत को स्वीकार कर लिया है। मैं आज पर्यन्त अद्वैत मतानुयायी था, मगर आज दयानन्द जी के दार्शनिक मत को मैंने हृदयंगम कर लिया है। वेदान्त का वास्तविक स्वरूप आज मेरी समझ में आ गया है। मेरे संशय निवृत्त हो गए हैं। मेरा मिथ्या ब्रह्मवाद उड़ गया है। इसलिए हे मेरे शिष्यो, अब आपको भी ऐसा ही करना उचित है। इस वक्तव्य के पश्चात् आनन्दवन जी बिना भोजन किए ही चले गए। उसके पश्चात् भी वे कभी-कभी सभा-मण्डप में आते रहते थे, परन्तु कभी बैठे नहीं। मुस्कराकर आनन्द से थोड़ी देर खड़े रहकर चले जाते थे। शास्त्रार्थ वाले दिन किसी के पूछने पर महर्षि ने उनके सम्बन्ध में कहा था कि यह बड़े विद्वान् संन्यासी हैं। अब तक वे जीव-ब्रह्म को एक मानते थे, परन्तु अब हमारे समान जीव और ब्रह्म को पृथक्-पृथक् मानने लगे हैं। (महर्षि दयानन्द जी के प्रमाणित जीवनचरित्रों से संकलित)

❑❑

कर्म और फल

(उत्तरा नेरूर्कर, 9545058310)

कुछ दिन पहले, अर्जुन देव स्नातक जी से वार्तालाप करते हुए, कर्म और फल के विषय में एक मतभेद उभर कर आया। उनका विश्वास था कि मनुष्य की जाति, आयु और भोग उसके जन्म पर निर्धारित हो जाते हैं और फिर उन्हें जीवनपर्यन्त कोई नहीं बदल सकता। यह विषय अवश्य ही जटिल है और इसको कोई मनुष्य पूर्णतया समझ नहीं सकता, ऐसा मेरा विश्वास है। जैसे गीता कहती है, **गहना कर्मणां गतिः (४/१७)-** कर्म और उनके फलों का विषय हमारे लिए समझना अत्यधिक कठिन है। तथापि हमारे जानने योग्य जो विषय हैं, वे वेद, दर्शनशास्त्र, मनुस्मृति, आदि, में निरूपित हैं। उनके ज्ञानालोक में, इस विषय पर मैं अपना दृष्टिकोण प्रस्तुत कर रही हूँ।

अर्जुनदेव जी के कथन का आधार है, योगदर्शन का यह सूत्र- **सति मूले तद्विपाको जात्यायुर्भोगः।।२/१३।।** इसको समझने के लिए इससे पिछला सूत्र भी पढ़ना पड़ेगा- **क्लेशमूलः कर्माशयो दृष्टादृष्टजन्मवेदनीयः।।२/१२।।** इन सूत्रों का अर्थ इस प्रकार है- कर्माशय वह है, जो कर्म करने के बाद बन जाता है, और फल देने के बाद निवृत्त हो जाता है। उन कर्माशयों के मूल में अविद्यादि क्लेश होते हैं। इन कर्माशयों को इस जन्म में और भावी जन्मों में भोगना पड़ता है। क्लेशों के बने रहते उन कर्माशयों के फल होते हैं- जाति, आयु और भोग। यहाँ 'जाति' अर्थात् किस योनि में जीवात्मा जन्म लेगी- वृक्ष, मछली, कीट-पतङ्ग, कुत्ता-बिल्ली, मनुष्य आदि , 'आयु' अर्थात् उस योनि में उसकी आयु कितनी लम्बी होगी; और 'भोग' अर्थात् उस आयु में उसको कितने सुख या दुःख झेलने पड़ेंगे। यदि हम ऊँची योनि में जन्म लेते हैं, तो हम अपने जीवन को बदलने में अधिक सक्षम होते हैं, हमारी कर्म और भोग में स्वतन्त्रता अधिक होती है, और हमारे भोगों के प्रकार अधिक होते हैं। यथा- नीची योनि का पेड़ अपने स्थान से हिल तक नहीं सकता; आँधी, बारिश, धूप-सभी को उसे सहना पड़ता है, जबकि उससे ऊँची योनि का एक भेड़िया गुफा की शरण ले सकता है, और सबसे ऊँचे पायदान पर मनुष्य तो सुन्दर घर बना सकता है। दूसरी ओर, भेड़िया केवल माँस ही खा सकता है, परन्तु मनुष्य तो अनेकों प्रकार के व्यंजनों के स्वाद ले सकता है। इस प्रकार योनि और भोग सम्बद्ध हैं। फिर, जितनी हमारी आयु लम्बी होगी, उतना ही भोग का समय अधिक मिलेगा। एक समय में जीव इतना ही भोग कर सकता है, सारे भोग एक-साथ नहीं कर सकता। सो, यदि आयु लम्बी है, तो भोग भी अधिक है। इस प्रकार आयु और भोग भी सम्बद्ध हैं। फिर एक योनि और एक आयु में भी कम या अधिक सुख होते हैं, जैसे- कोई मनुष्य गरीबी झेलता है, कोई धनी होता है। इस प्रकार, तीनों ही विषय एक-दूसरे से जुड़े हैं, उनको पूर्णतया अलग करना कठिन है। फिर भी, व्यवहार में, हम इनके अलग-अलग अर्थ आसानी से समझ सकते हैं।

अब, कर्मों के विषय में हमें यह समझना चाहिए कि उनके कर्माशय एक अकाउण्ट की तरह होते हैं। उनमें से 'संचित कर्म', हमारे सेविंग अकाउण्ट की तरह, पुण्यात्मक और पापात्मक कर्माशयों को अलग-अलग जोड़ते जाते हैं; 'प्रारब्ध कर्म' वे हैं जो इस जन्म में फलित होने हैं, जैसे सेविंग अकाउण्ट से उनको करन्ट अकाउण्ट में ट्रांस्फर कर दिया गया हो; 'क्रियमाण कर्म' वे हैं, जो इस जन्म में हमारे कर्मों के कारण जुड़ रहे हैं। क्रियमाण कर्मों में से कुछ तो सद्य फल देते हैं, जबकि दूसरे संचित में जुड़ जाते हैं। जैसे शेर ने शिकार किया, तो उसे भोजन प्राप्त हुआ; यदि नहीं किया, तो नहीं मिला- यह सद्य फल देने वाला क्रियमाण कर्म हुआ। और ब्याध ने दया करके शेर को छोड़ दिया, तो वह दया-कर्म संचित कर्म में जुड़ जायेगा।

अब हम देखते हैं कि इन जाति, आयु और भोग को इस जीवन में बदला जा सकता है कि नहीं। अर्जुनदेव जी की मान्यता है कि ये नहीं बदले जा सकते, क्योंकि योगसूत्र के प्रमाण के अलावा, उन्होंने निजी जीवन में भी पाया है कि बहुत संयमी जीवन व्यतीत करने वाले और अत्यन्त नेकजन भी भयंकर बीमारियों से पीड़ित होते हैं और अनेक कष्ट भोगते हैं, जबकि अनेक व्यभिचारी और दुराचारी लोग मजे में जीवन व्यतीत करते हैं। अर्जुनदेव जी को यह वेदना है कि कितने आर्यसमाजी नित्य हवन और सन्ध्योपासना करते हैं, तथापि उनकी आयु और स्वास्थ्य अन्य माँसाहारियों और मद्यपान करने वालों से न्यून होता है। निर्दोष जीवन जीने के बाद भी उन्हें सुख-भोग प्राप्त नहीं होता। अवश्य ही, यह हम सभी का आँखों-देखा, भुक्ता हुआ सत्य है! इससे मुझे महाभारत का वह प्रकरण याद आता है, जिसमें युधिष्ठिर अत्यन्त व्यथित होकर अपने भाइयों से कहते हैं - "दुर्योधन ने तो सदा पाप किए और वह महलों में रह रहा है और हमने सदा धर्म से जीवन निर्वाह किया, फिर भी हम जंगलों में विचर रहे हैं।" इन तीनों का विश्लेषण हम एक-एक करके करते हैं।

निश्चित रूप से जाति को बदलना असम्भव है। जिस योनि में हम पैदा हुए हैं, यहाँ तक कि जिस गृह में हम उत्पन्न हुए हैं, उस समय उसे हम स्वयं नहीं बदल सकते। सो, बाकी बचते हैं आयु और भोग। इनमें से पहले लेते हैं भोग। यह आज की परिस्थिति में मुख्यतः धन पर निर्भर है, और धन परिश्रम पर। हाँ, अवश्य ही कुछ लोग धनी परिवार में जन्म लेते हैं और उनको उसके लिए अधिक परिश्रम नहीं करना पड़ता और गरीब परिवार वाले को उसको एकत्र करने में औरों से कहीं अधिक परिश्रम करना पड़ता है। परन्तु क्या वे दोनों ही अपने प्रारब्ध को बदल सकते हैं?

प्रथम एक शेर का उदाहरण लेते हैं। सम्भव है कि शेर के प्रारब्ध में एक दिन भोजन प्राप्त करना लिखा है। तथापि वह आलस्य करता है और शिकार के लिए नहीं जाता है। उसके प्रारब्ध के कारण, शिकार उसकी गुफा के सामने से निकलता है, फिर भी सिंह अपनी आँखें नहीं खोलता। तो क्या उसे उस दिन भोजन प्राप्त हो जायेगा? नहीं, कदापि नहीं। कितना भी उसके भाग में भूखा रहना न हो, तथापि उसका आलस्य सद्य फल देगा और प्रारब्ध को भी उलट देगा। इसी प्रकार यदि आपके गृह में भोजन बनाने के सभी पदार्थ उपलबध हों, तथापि आप भोजन बनाने में आलस करें, तो उस दिन आपको भोजन मिल ही नहीं सकता। भाग्यवश, पड़ोसी आकर आपको बना-बनाया भोजन देने के लिए घर पर आए, परन्तु आप द्वार तक न खोलें, तो इसमें न तो परमात्मा को दोष दिया जा सकता है, न आपके भाग्य को; दोष केवल आपके आलस्य का होगा। इसीलिए सुभाषित कहता है-

उद्यमेनैव सिध्यन्ति कार्याणि न मनोरथैः।
न हि सुपतस्य सिंहस्य प्रविशन्ति मुखे मृगाः।।

अर्थात् कार्य इच्छाओं से सिद्ध नहीं होते, अपितु परिश्रम से ही होते हैं, जिस प्रकार सोते हुए सिंह के मुँह में मृग स्वयं नहीं घुस जाते हैं।

इस विषय में कि पुरुषार्थ करने पर ही फल प्राप्त होता है, सम्भवतः आप को भी कोई सन्देह न हो। परन्तु यदि मैं आपको उल्टा उदाहरण दूँ कि यदि शेर शिकार पर निकला, तो उसको भोजन प्राप्त हो गया, तब अवश्य ही आपको आपत्ति होगी कि यदि उसके प्रारब्ध में नहीं है, तो नहीं भी मिलेगा। और यह सही भी है। यह एक नियम है कि पुरुषार्थ के बिना प्रारब्ध से नियत फल भी नहीं मिलता, परन्तु पुरुषार्थ करने पर परमात्मा के ऊपर निर्भर है कि वे फल इस समय देते हैं या रोक लेते हैं, विशेषकर जब वह फल हमारे प्ररब्ध में नहीं था। इसीलिए गीता कहती है- **कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन...।।२/४७।।**- तेरा अधिकार केवल कर्म करने का है, फल प्राप्त करने का नहीं।

यदि पुरुषार्थ आपके प्रारब्ध को बदलने में असमर्थ हो, तो वेद के वे सारे मन्त्र निष्फल हो जाएँ, जो आपको पुरुषार्थ करने को प्रेरित करते हैं, यथा- **कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः।...।। यजु. ४०/२।।**

यदि हम पूरे मनोबल से किसी कार्य में जुट जायें, तो परमात्मा हमारे प्रारब्ध तक को बदल देगा। यदि वह सकारात्मक फल को रोक सकता है, तो नकारात्मक फल को भी तो वैसे ही रोक सकता है।

अब लेते हैं आयु। निश्चयेन, इसको प्रमाणित करना अत्यधिक दुष्कर है, क्योंकि किसे पता है कि किसी की आयु कितनी है! तथापि यह सर्वमान्य सत्य है कि यदि हम विष लेते हैं, तो हमारा बचना कठिन है। इसी प्रकार वैज्ञानिकों ने पाया है कि धूम्रपान करने से कैंसर द्वारा शीघ्र मृत्यु होना प्रायः निश्चित है। भोग के समान यहाँ भी, यह प्रमाणित करना सरल है कि व्यसनों से हमारी आयु घटती है, परन्तु व्यायाम आदि से आयु बढ़ती है, यह कहना कठिन हो जाता है। यही अर्जुनदेव जी का संशय भी है। वेद, आयुर्वेद, आदि, ग्रन्थों का इस विषय में प्रमाण तो है ही, परन्तु हमें यह भी समझना चाहिए कि जब नकारात्मक परिणाम निश्चित है, तो सकारात्मक परिवर्तन भी सम्भव होगा ही! वैज्ञानिक क्यों कहते हैं कि व्यायाम से आयु बढ़ती है, यदि प्रमाणित नहीं किया जा सकता? क्योंकि उन्होंने बहुत से लोगों पर अनुसन्धान करके इस सत्य को पाया। इसलिए यह मानना गलत है कि कोई अपनी आयु को परिवर्तित नहीं कर सकता।

तथापि हम पाते हैं कि कोई नेकजन कैंसर से अत्यधिक कष्ट पाकर ३५ वर्ष में मर गया। उसने व्यायाम आदि उपाय भी किए थे। तो क्या सम्भव है कि उसकी निर्धारित आयु २५ थी, और उसने अपने उपायों से उसे ३५ वर्ष कर लिया? क्या यह भी सम्भव नहीं हो सकता है कि उसकी मृत्यु और भी भयंकर होनी थी, परन्तु अपने नेक आचरण से उसने अपनी स्थिति थोड़ी सुधार दी? हम कैसे जानें कि परमात्मा ने किस आधार पर किसी को क्या फल दिया?! वस्तुतः, हम कभी नहीं जान सकते कि पहली स्थिति क्या थी और हमारे प्रयासों से वह क्या हो गई। वेदादि के दिशानिर्देश से ही हमें सान्त्वना करनी पड़ेगी। और जब प्रारब्ध हमारे प्रयासों से बलवत्तर पड़े, तब परमात्मा की शरण में जाना ही एक उपाय शेष रहता है और जो हो रहा है, उसको हँसते-हँसते स्वीकारना आवश्यक हो जाता है। इसका जीवन्त उदाहरण थे- महर्षि दयानन्द सरस्वती, जिन्होंने अत्यन्त कष्ट में अपना शरीर त्यागा, परन्तु अन्तकाल तक अपना उपचार कराया, जिससे कि परमात्मा की इस अमूल्य देह की यथासम्भव रक्षा कर सकें। परमात्मा और उसकी कर्म-फल व्यवस्था में उनका विश्वास अडिग रहा।

उनकी कथा पर चिन्तन करने पर, मुझे लगता है कि जो पवित्र लोग होते हैं, उन पर आपदाएँ कभी-कभी इतनी अधिक आती देखी जाती हैं, उसके कुछ विशेष कारण हैं। प्रथम, हम अपनी सवयं की सहन-शक्ति तब तक नहीं जान पाते, जब तक हम पर आपदा नहीं पड़ती। जो अध्यात्म-मार्ग पर चल रहा होता है, वह संकट की घड़ी में परमात्मा को कोसने लगे, तो समझो वह परमात्मा की परीक्षा में उत्तीर्ण नहीं हुआ। परमात्मा तो, त्रिकालज्ञ होने से, पूर्व ही जानते हैं कि हम उत्तीर्ण होंगे कि नहीं, पर हमें अपनी कमी या पूर्णता दर्शाने का उसका यही प्रकार है। द्वितीय, यदि इस परीक्षा में हम उत्तीर्ण हो जाते हैं, तो हमें अपनी शक्ति तो ज्ञात हो ही जाती है, परन्तु अन्यों के लिए भी हम आदर्श बन जाते हैं, जिस प्रकार स्वामी दयानन्द की मृत्यु-पर्यन्त धैर्य और ईश्वर-भक्ति हम सभी के लिए प्रेरक है। तीसरे, इसमें मेरे पास कुछ प्रमाण तो नहीं है, केवल अन्यों के अनुभव का ज्ञान है- जो अत्यन्त भले लोग होते हैं, वे जाते-जाते अपने सारे दुष्ट-कर्माशय जैसे भोग जाते हैं, जिससे कि अगले जन्म में परमात्मा उनको बहुत सुखपूर्ण जीवन दे सके। दूसरी ओर, दुष्ट लोग प्रायः यौवनावस्था में, पूर्ण स्वस्थ होते हुए, चल बसते हैं। जैसे- अफ्रीका का इदि अमीन या पाकिस्तान का जिया उल हक। इनका जीवन देखकर तो लगता है कि इन्होंने अपने किए का कुछ भी फल नहीं भोगा। परन्तु सम्भवतः, परमात्मा उनके सारे पुण्य उनको इस जन्म में भुक्ता देता है, जिससे कि अगले जन्म में, केवल पापकर्मों के कारण, उन्हें वह नीची योनि में डाल सके।

इस प्रकार, जहाँ एक ओर पूर्वजन्म के कर्म इस जन्म में भी हमारे सुख-दुःख का निर्धारण करते रहते

हैं, वहीं दूसरी ओर हमारा इस जन्म का प्रयास या आलस्य हमारी स्थिति को सुधारने या बिगाड़ने में अवश्य कारगर होता है। सो, वेद के उपदेशानुसार, हमें सदा ही पुरुषार्थ करते रहना चाहए, और सौ वर्ष की आयु की कामना करते हुए, सब आयु- या बल-नाशक व्यसनों से दूर रहना चाहिए, व ज्ञान और पुण्य को दोनों हाथों से बटोरने में लगे रहना चाहिए। परमात्मा हमारे किसी भी नेक प्रयास को अनदेखा नहीं करेगा, यह विश्वास सदा प्रबल रहना चाहिए व हमें कभी भी हतोत्साह नहीं होना चाहिए।

(मेरे पित्रतुल्य श्री रघुवीर शरण अध्यापक यद्यपि आर्यसमाज से जुड़े तो नहीं हैं और भाग्यवादी हैं, पुनरपि उन्होंने मेरे गुरुकुल-प्रवास के समय मुझे पुरुषार्थ का महत्व समझाने के लिए एक दोहा लिख भेजा था। यहाँ प्रासंगिक है, इसलिए साझा कर रहा हूँ-उद्यम-उद्यम बस उद्यम ही सबसे बढ़कर है। भाग्य बेचारा क्या करे वो तो उद्यम का अनुचर है।वैसे भी ये तो निर्विवाद ही है कि प्रारब्ध पुरुषार्थ से ही बनता है। बिना पुरुषार्थ के प्रारब्ध का कोई अस्तित्व ही नहीं है। दिनेश कु० शास्त्री,कार्या०-व्यवस्थापक)

ओ३म् परमात्मने नमः।

पृष्ठ ११ का शेष

के वेदमूर्ति धर्माचार्य गागाभट्ट ने यह कहकर छत्रपति शिवाजी के राज्याभिषेक की स्वीकृति दी कि विदेशी मुस्लिम आक्रान्ता हिन्दुओं पर अत्याचार कर आर्यावर्त के सिंहासन पर बैठ सकते हैं, तो एक हिन्दू राजा जिसने चार-चार पातशाहियों को रौंदकर जन्म एवं कर्म से स्वयं को क्षत्रिय सिद्ध कर दिया हो और जो राजस्थान के सिसोदिया वंश का वंशज हो, जिसका राज्याभिषेक वेदादि शास्त्रों से स्वयं सिद्ध है, उसका राज्यारोहण क्यों नहीं हो सकता? भले ही महाराष्ट्र के कर्मठ ब्राह्मण उनका राज्याभिषेक न करें, लेकिन काशी का यह ब्राह्मण उनका वेदोक्त पद्धति से राज्याभिषेक करेगा। इस प्रकार ६ जून १६७४ ई० को छत्रपती शिवाजी महाराज को बड़े समारोह के साथ महाराष्ट्र के राजसिंहासन पर आरूढ़ किया गया।

इसी तरह काशी और महाराष्ट्र को जोड़ने वाली एक और पूर्व मध्यकालीन ऐतिहासिक घटना का भी अपने व्याख्यान में जिक्र किया, जो दोनों प्रदेशों को सांस्कृतिक दृष्टि से जोड़ती है। महाराष्ट्र के संत शिरोमणि ज्ञानेश्वर महाराज के पिता विट्ठल पन्त अत्यन्त वेराग्य वृत्ति के थे। उनका विवाह रुक्मिणीबाई से हुआ था। गृहस्थ में मन न लगने और वैराग्यवृत्ति में वृद्धि होने के कारण उन्होंने काशी के सन्यासी स्वामी रामानन्द से संन्यास की दीक्षा ली। रामानन्द स्वामी जब दक्षिण की यात्रा पर निकले, तब आलंदी गाँव में रुक्मिणी देवी ने स्वामीजी के दर्शन किये। स्वामीजी ने उन्हें पुत्रवती होने का आशिर्वाद दिया। जब रुक्मिणी ने विट्ठल पन्त की घटना सुनाई, तो उन्हें बड़ा पश्चाताप हुआ और उन्होंने वापस काशी लौटकर विट्ठलपन्त को आदेश दिया कि आप वापस गृहस्थधर्म में लौट जाओ। विट्ठलपन्त ने भी गुरू की आज्ञा मानकर फिर से गृहस्थी बनना स्वीकार किया। इस प्रकार स्वामी चैतन्याश्रम फिर से विट्ठल पन्त बन गये। गृहस्थाश्रम में उनके तीन पुत्र और एक कन्या हुई। सन्त ज्ञानेश्वर का जन्म शकसम्वत ११९७ अर्थात् ई.स. १२७५ में जन्म हुआ। इस परावर्तन काल में इस परिवार को अत्यधिक अपमान सहन करना पड़ा। कर्मकाण्डियों के अमानवीय व्यवहार से पिता और पुत्र दोनों को प्राण त्यागने पड़े। संतश्रेष्ठ ज्ञानेश्वर ने ज्ञानेश्वरी जैसा आध्यात्मिक ग्रन्थ आयु के १७वें वर्ष में रचा, जो मराठी का प्रसिद्ध गीता काव्य भाष्य कहलाता है। इसी के साथ उन्होंने अनेक आध्यात्मिक ग्रन्थों की रचना की। उन्होंने सामाजिक जीवन में उनको कष्ट और अपमान सहन करते हुए महज २१ वर्ष की आयु में स्वेच्छा से देह त्याग (समाधि) कर इस असार संसार को त्याग दिया।

❑❑

आर./आर. नं० १६३३०/६७
Post in Delhi R.M.S
०५-११/०३/२०१६
भार- ४० ग्राम

मार्च 2016

रजिस्टर्ड नं० DL (DG -11)/8029/2015-17
लाईसेन्स नं० यू (डी०एन०) १४४/२०१५-१७
Licenced to post without prepayment
Licence No. U (DN) 144/2015-17

पाठकों से निवेदन

१. अपने पत्रों में अपनी ग्राहक संख्या अवश्य ही लिखा करें, अन्यथा कार्यवाही सम्भव नहीं होगी।
२. १५ तारीख तक प्रतीक्षा करके ही दुबारा अंक मँगाएं, यदि अंक न पहुँचा हो।
३. यदि आप अपना पता बदलवायें तो यह ध्यान रखें कि बदले हुए पते पर अंक-प्रेषण एक माह बाद आरम्भ होगा।
४. अंक के रेपर पर अपना पता चैक कर लिया करें। यदि कोई त्रुटि हो, तो सूचना दे दिया करें।
५. जिन ग्राहकों का शुल्क समाप्त है, अविलम्ब भेजने की कृपा करें।

दिनेश कुमार शास्त्री
कार्यालय व्यवस्थापक
मो०-९६५०५२२७७८

ओ३म्

भारत में फैले सम्प्रदायों की निष्पक्ष व तार्किक समीक्षा के लिए उत्तम कागज़, मनमोहक जिल्द, सुन्दर आकर्षक छपाई एवं (द्वितीय संस्करण से मिलान कर शुद्ध प्रामाणिक संस्करण)

सत्य के प्रचारार्थ

सत्यार्थ प्रकाश

सत्य के प्रचारार्थ

● प्रचार संस्करण (अजिल्द) 23×36÷16	मुद्रित मूल्य 50 रु.	प्रचारार्थ 30 रु.	प्रचारार्थ मूल्य पर कोई कमीशन नहीं
● विशेष संस्करण (सजिल्द) 23×36÷16	मुद्रित मूल्य 80 रु.	प्रचारार्थ 50 रु.	
● स्थूलाक्षर सजिल्द 20×30÷8	मुद्रित मूल्य 150 रु.		प्रत्येक प्रति पर 20% कमीशन

10 या 10 से अधिक प्रतियाँ लेने पर विशेष अतिरिक्त कमीशन

कृपया, एक बार सेवा का अवसर अवश्य दें और महर्षि दयानन्द की अनुपम कृति सत्यार्थ प्रकाश के प्रचार प्रसार में सहभागी बनें

आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट
427, मन्दिर वाली गली, खारी बावली, दिल्ली-6
Ph. :011-43781191, 09650622778
E-mail : aspt.india@gmail.com

छपी पुस्तक/पत्रिका

श्री सेवा में..............................
ग्राम..............................
डा0..............................
जिला..............................

मुद्रक, प्रकाशक व सम्पादक धर्मपाल आर्य, स्वामित्व आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट, ४२७, गली मन्दिर वाली, नया बांस, खारी बावली, दिल्ली-११०००६ से प्रकाशित एवं तिलक प्रिंटिंग प्रेस, २०४६, बाजार सीता राम, दिल्ली-११०००६ से मुद्रित।